प्रमात्रिक गतिकी के चित्र

रोशन राज

(तृतीय वर्ष छात्र)

पर्यवेक्षक- डॉ० विकाश कुमार ओझा

(भौतिकी विभाग)

सरदार वल्लभभाई राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, सूरत

२०७९ विक्रमी, ज्येष्ठ-श्रावण प्रतिपदा

विषय सूची

1 आधार **5**
1.1 प्रमात्रिक गतिकी के पूर्व 5
1.2 प्राचीन भौतिकी का स्मरण 15

2 प्रवेश **25**
2.1 प्रथम प्रमात्रिक चित्र: हाइजेनबर्ग 26
2.2 प्रकृति की गैर-निर्धारणात्मक रूप 32

3 प्रमात्रिक गतिकी **35**
3.1 द्वितीय प्रमात्रिक चित्र: श्रोडिंगर 35
3.2 डिराक चित्र 40
3.2.1 डिराक के अनुसार : श्रोडिंगर चित्र 40
3.2.2 डिराक के अनुसार : हाइजेनबर्ग चित्र 44
3.2.3 तृतीय प्रमात्रिक चित्र: डिराक 45

अध्याय 1

आधार

प्रकृति सर्वदा मुक्त हैं। उसकी मनोरमता इतनी अद्भुत है कि साधारण से शब्दों में अव्यक्त ही रहें। हर मोड़ पर सममित रह, स्थूल या सूक्ष्म अध्ययन में एकरूपता का एहसास निहित किए सारी संभावनाओं को उनके तीव्रता के परिणामस्वरूप इंगित करना, मनुज मेधा को आकर्षित करता है, उसकी प्रवृत्ति अथाह गुप्त रहकर अपनी विशुद्ध क्षमताओं को समेट, केवल सुन्दर मनन द्वारा निखर आना ही इसकी सुचिता है।

प्रमात्रिक यांत्रिकी (क्वांटम मैकनिक्स) एक विस्तृत अध्ययन क्षेत्र है, जो हमें प्रकृति में सूक्ष्म स्तर पर निरंतर घट रहीं प्रक्रियाओं, मूल संरचनाओं आदि से परिचित करवाता है। ज़रा ख्याल कीजिए कि यह जो संसार जिसे हम सब देख रहे हैं, उसके निर्माण या यथा स्वरूप को प्राप्त करने हेतु इस जगत ने कितनी ही नियमानुसार चपलता से सभी छोटे-छोटे कंकड़ दाने को उनके अपने सही-सही स्थानों पर रख कर, जो व्यापकता से एकटक देखने पर जीवंत तस्वीरों का एहसास करवाता है, वो जो रोचक है, अवाक और प्रेरित करता है।

1.1 प्रमात्रिक गतिकी के पूर्व

हम इस अध्ययन में प्रयास करेंगे प्रकृति के उन नियमों को प्राप्त करने की जो इस वास्तविकता की मेरु है। इतिहास केवल कहता है कि लगभग एक शताब्दी पूर्व कुछ भौतिकी के दार्शनिक निष्पक्षता से परमाणु (एटम) की संरचना को गणितीय गणनाएं एवं प्रयोगों के माध्यम से समझ रहे थे। उन्होंने निश्चित कर लिया था कि परमाणु का आवेश (चार्ज) शून्य होता है, जिसमें कि कुछ ख़ास संख्या में ऋणु (इलेक्ट्रॉन) हैं और एक घने द्रव्यमान (मास) का केंद्रक (न्यूक्लियस) जो कि केंद्र में विद्यमान है, जहां कुछ ऋधाणु (न्यूट्रॉन) और उसी ख़ास संख्या में धणु (प्रोटॉन) साथ मिलकर रहते हैं। जब तक कुल ऋणु- जो ऋणात्मक आवेश वाला शायद एक कण है और दूसरा कण धणु-जो कि उसी मात्रा में धनात्मक आवेश ग्रहण किए हुए है, कि अगर उनकी संख्याएं एक बराबर हो, परमाणु शून्य आवेशित रहता है। वहीं अगर ऋधाणु की कुल संख्या, धणु से एक ख़ास मात्रा में अधिक हो जाए तो, परमाणु स्थिर नहीं रह पाता है, बल्कि उसमें नाभिकीय अभिक्रियाओं का प्रारंभ हो जाता है। ख़ैर इन बातों के इतर एक आम-सा प्रश्न यह है कि आख़िर ऋणुओं ने कैसा तन्त्र अपनाया है, जिसके कारण वे केंद्रक की ओर खींचे चले नहीं जाते हैं, बावजूद कि दोनों के आवेश भिन्न होते हैं? किसी ने इसका समाधान देने के क्रम में सोचा कि शायद वो केंद्रक की परिक्रमा कर रहे हो, जैसे पृथ्वी सूर्य का अंडाकार-सी एक काल्पनिक पथ पर परिक्रमा करती है। एक व्यक्ति थे, मैक्सवैल जिन्होंने गतिशील आवेश के बारे कुछ तथ्यात्मक जानकारियां दी, उनका कहना है कि एक त्वरित आवेशित वस्तु (बिन्दु-सा), धीरे-धीरे अपनी ऊर्जा (एनर्जी) खो देता है, चूंकि वह विकिरण (रेडिएशन) उत्सर्जित करता है, हमें

तो इतना पता है कि वस्तु त्वरित करती है अगर उसकी चाल की मात्रा में बदलाव हो, या उसकी दिशा में निरंतर परिवर्तन हो (किसी भी प्रकार का वलयकार पथ), या फिर दोनों ही राशियां (क्वांटिटीज़) प्रतिदर से बदल रही हो। अतः अब उनकी बातों को माना जाय तो, किसी परमाणु का कोई भी ऋणु निश्चित वृताकार अथवा अंडाकार कक्षा (ऑर्बिट) में यूहीं चक्कर काटता नहीं रह सकता है। तो अब क्या ही विचार किया जाए? यही कि ऋणु गतिशील नहीं हो! बल्कि वह चुपचाप शान्ति से परमाणु में गूथा हुआ रहे, जैसे अंजीर के फल में उसके बीज अंतर्निहित होते हैं, किन्तु इस परिस्थिति को मान्यता देने पर हमें यह भी मानना होगा कि कोई भी धनात्मक आवेश वाला केन्द्रक नहीं होगा, जो कि आज से एक शताब्दी पूर्व किसी को स्वीकार नहीं ना था नाही आज है, (गीइगर-मार्सडेन के प्रयोगों को देखें)। अगर हम बस मान ले, हो सकता है कि लोग हमारा उपहास करे! कि कोई भी ऋणु गतिशील ही रहता है, वह भी केन्द्रक की चारों ओर वृत्ताकार पथ पर एक समान वेग (वेलोसिटी) से; मैक्सवेल पर पर्दा डालकर हम आगे सोचते हैं कि ऋणु की ऐसी गतिशीलता से कोई विकिरण भी उत्सर्जित नहीं होती है, जिसके कारण कोई ऊर्जा का ह्रास नहीं होता है। थोड़ा-सा विश्वास कीजिए मेरा कि लगभग एक शताब्दी पूर्व ऐसी बातों को मनवाने के लिए आपको बहुत अच्छा वक्ता होने साथ-साथ आपके पास ढेर सारे प्रयोगशालाओं से एकत्रित किए गए सबूत होने चाहिए, एक समझ में आ सकने वाला सिद्धान्त, और भौतिकी वाले ज्योतिषी की भांति आप इतने-से सामग्री द्वारा परमाणु में घट रहे क्रियाकलापों का हेतुत्व बता सकने में समर्थ हो, भौतिकशास्त्री निल्स बोह्र ने कुछ ऐसा ही अंजाम दिया था। उस समय, इन सब का परिणाम यह हुआ कि बोह्र के विचार वास्तविकता के करीब थे, लोग हैरान व जिज्ञासु थे कि वह कौन-सी दिव्य कक्षा है, जो कि कोई भी ऋणु को केंद्रक के ओर कूद पड़ने से रोकी रहती हैं, पर कैसे? काफ़ी समय तक इसका उत्तर किसी के पास नहीं था, बस थे तो कुछ चंद अभिगृहित और उनके मंथन से उत्पन्न नई विषयक संगोष्ठी व आह्लाद से प्रकाशित की गई काग़ज़ी पन्ने। अर्नोल्ड सोमरफेल्ड ने कुछ बाते जोड़ी कि ऋणु अण्डाकार कक्षा में भी गतिमान रह सकता है, जहां केंद्रक परमाणु के केन्द्र में ना होकर कक्षा के किसी भी एक नाभि (फ़ोकस) में अवस्थित रहता है। निकोल्सन द्वारा दिए गए एक सूत्र जो बतलाता है कि ऋणुओं का कोणीय संवेग (ऐंगुलर मोमेन्टम) का मान मनचाहा नहीं हो सकता बल्कि वह कुछ ही ख़ास निश्चित मान में हो पाएगा, वह सूत्र है $L = n\frac{h}{2\pi}$, बोह्र ने इसे प्रथम प्रमात्रिक शर्त (क्वांटम कन्डीशन) कहा, किसी कक्षा के ऊर्जा के लिए कुछ ऐसी ही बाते कही गई कि वह भी निश्चित मात्रा में विकिरण उत्सर्जित करने योग्य है, $E = n\frac{h\omega}{2\pi}$, जहां n एक प्राकृतिक संख्या है, ये मैक्स प्लैंक एवं आइंस्टीन के सिद्धांतों से प्रेरित थे। वैसे अगर आपको किसी कक्षा की ऊर्जा का सूत्र देखना है तो, थोड़े से गणित करने पर आपको यह सूत्र प्राप्त होती हैं,

$$E = -\frac{me^4 Z^2}{8n^2\varepsilon_0^2 h^2} \tag{1.1}$$

अब सोमरफेल्ड ने कहा कि बोह्र के प्रथम प्रमात्रिक शर्त, जो कोणीय संवेग की प्रमात्रिक्ता (क्वानटाइजेशन) दर्शाता है, उसके सूत्र में n के स्थान पर $\frac{n}{k}$ कर देना चाहिए (उनकी गणना में $\frac{k^2}{n^2} = 1 - \epsilon^2$ आ रहा था, जो कि अंडाकार वृत के दोनों व्यासों का अनुपात थी और ϵ दीर्घवृत की विलक्षणता (इंट्रेनसिसीटी) का मापक है, हम आगे विस्तृत रूप में जानेंगे), जहां $k = \{1, 2, \ldots, n-2, n-1, n\}$ होता हैं , तब $L = \frac{n}{k}\frac{h}{2\pi}$, हो जाएगा, इससे हमें वृताकार के साथ-साथ अंडाकार कक्षाएं मिल सकते हैं। ये सब करना इसलिए जरूरी था कि जब भी हम किसी भी तत्व के वर्णपट्टी धारियां (स्पेक्ट्रेल लाइंस) देखते हैं, तो उस पर हमें कुछ मुख्य गहरी रंग की धारियां दिखती हैं, उन्होंने n के मान को मुख्य गहरी धारी के लिए जिम्मेदार बताया एवं किसी भी गहरी धारी को और करीब से देखने पर कई महीन कम चमकदार महीन धारियां (फाइन लाइंस) भी देखने को मिलती हैं, इन "महीन धारियों" के लिए k के मान को जिम्मेदार ठहराया गया, मामला इतना सीधा भी नहीं हैं, हम आगे देखेंगे। अगर आपने ध्यान दिया होगा कि ऊर्जा के सूत्र में भी n निहित है, अतः ये जो धारियां है उनका सम्बंध भी ऊर्जा से होना चाहिए! कितुं ये भी महत्वपूर्ण है कि उसके सूत्र में k नहीं है, क्या ऊर्जा के सूत्र में सुधार होना चाहिए? जैसे निकोल्सन के कोणीय

संवेग के सूत्र को सोमरफेल्ड-बोह्र ने काफी विस्तृत किया था। आपको जानकर हर्ष होगा कि भौतिशास्त्रियों ने ऊर्जा के सूत्र में सुधार किया था और उसमें दोनों n एवं k की मौजूदगी पाई गई। वह संशोधित ऊर्जा सूत्र है, जो महीन धारियों की ऊर्जा बतलाता है,

$$E = \frac{R_\infty \alpha^2 Z^4}{n^4}\left(\frac{n}{k} - \frac{3}{4}\right) \tag{1.2}$$

इसी के साथ-साथ एक और ऊर्जा का सूत्र मिलता हैं,

$$E = \frac{R_\infty \alpha^2 Z^4}{n^4}\left(\frac{n}{k-1} - \frac{3}{4}\right) \tag{1.3}$$

ये आपको सोचना हैं की हमें दो ऊर्जा के सूत्र क्यों प्राप्त हो रहें हैं?, कोई चाहे तो इन्हें एक संयुक्त रूप में भी लिख सकता हैं। $E = \frac{E_n^2}{2mc^2}\left(3 - \frac{4n}{j+1/2}\right)$, अगर हम इसमें बोह्र द्वारा दिए गए ऊर्जा के सूत्र को समाहित के देते हैं तो हमें प्राप्त होता है,

$$E = -\frac{2\pi^2 m e^4 Z^2}{n^2 h^2 (4\pi\varepsilon_0)^2}\left[1 + \frac{\alpha}{n^2}\left(\frac{n}{j+1/2} - \frac{3}{4}\right)\right] \tag{1.4}$$

शायद आपका सवाल हो कि उपर्युक्त में n तो है किन्तु k कहीं नहीं है, बल्कि j है, तो आपको मेरा विश्वास करना होगा कि, अगर आप $l = k - 1$ लिखें, फिर ये जो j है वह एक फलन (फंगक्शन) होगा $f(l)$ का, सीधे शब्दों में कहे तो j के अन्दर l मौजूद है, अर्थात् k भी मौजूद है। (अभी आपको j के बारे में अधिक नहीं बताया जा सकता, हम बस स्वीकार कर लेते हैं, हम आगे अगर आवश्यकता आई तो इसका अर्थ व महत्ता जानने का प्रयास करेंगे)। यह जानना महत्वपूर्ण हैं कि उपर्युक्त में $\alpha = \frac{e^2}{4\pi\varepsilon_0 hc}$ एक सार्वभौमिक नियतांक (कॉन्स्टेंट) है, जिसे सूक्ष्म स्थिरांक (फाइन स्ट्रक्चर कॉन्स्टेंट) भी कहते है तथा $R_\infty = \frac{me^4}{8\varepsilon_0^2 h^3 c}$ को रीडबर्ग नियतांक कहते हैं।

इन सभी बातों को एक साथ समेट कर देखा जाएं तो कहानी यह बनती है कि बहुत सारी छोटी-छोटी अंडाकार कक्षाएं (उपकक्षाएं) हैं, जो केंद्रक से निश्चित दूरियों पर स्थित है और कुछ उपकक्षाओं का झुण्ड हमें एक निश्चित कक्षा का बोध-सा कराता है, ठीक वैसे ही वर्णपट्टी के महीन धारियों के झुण्ड को दूर से देखने पर वे एक गहरी मुख्य रेखा प्रतीत होती है। अब हरेक उपकक्षा की अपनी ऊर्जामान है और जब कोई ऋणु एक कक्षा से दूसरी कक्षा में कूदता है, तो दोनों के अंतर ऊर्जाओं ΔE के समान के मान वाली विकिरण उत्सर्जित करता है।

यह जो अनुरूपता के मेल का स्पष्ट दर्शन हमें वर्णपट्टी की गहरी मुख्य रेखा, ऋणु का वृताकार कक्षा, संख्या n की कक्षा का त्रिज्या का द्योतक होना और कोणीय संवेग तथा ऊर्जा के प्रमात्रिक सूत्रों में n की प्रमुखता होना, ये हमें बोह्र द्वारा जान पड़ता है। सोमरफेल्ड-बोह्र के अथक प्रयासों से वर्णपट्टी की अनेक महीन धारियां, ऋणु का अंडाकार कक्षा, संख्या k का आगमन जहां n एवं k का अनुपात दीर्घवृत्त के मुख्य अर्धव्यास एवं अल्प अर्धव्यास के अनुपात को इंगित करना और कोणीय संवेग तथा ऊर्जा के प्रमात्रिक सूत्रों में n के अलावा k की भी निर्भरता दिखाई देना, ये सभी तथ्य सामने आते हैं। इस प्रकार वर्णपट्टी की धारियां, कक्षा की संरचना एवं सूत्रों में एक ख़ास संख्या की मौजूदगी तथा उसका योगदान आदि सब एक प्रकार से एक दूसरे के लिए आईने-सा काम करते हैं; वह एक ही है जो विभिन्न स्वरूपों में दर्शनीय हैं।

अब एक अदना-सा प्रश्न हमें जिज्ञासावश पूछना चाहिए, कि क्या किसी भी n के मान के लिए, जो कुछ भी उपकक्षाएं मिलती हैं (विभिन्न k अथवा l) वह एक दूसरे से किस प्रकार संयोजित/व्यवस्थित या विन्यस्त है? उनके सजे रहने का प्रारूप क्या है?

इसके उत्तर तक पहुंचने के लिए हमें कुछ बातें याद करनी होगी, जैसे कि जब $n = 1$ होगा, तब $k = \{1\}$, जब $n = 2$ होगा, तब $k = \{1, 2\}$, जब $n = n$ होगा, तब $k = \{1, 2, 3, \ldots, n\}$, अतः n के दिए गए मान के लिए, k की कुल n संख्याएं होते हैं, अर्थात् कुल n उपकक्षाएं है। हम देखते हैं कि हरेक उपकक्षा की ऊर्जा वर्णपट्टी पर महीन धारियों द्वारा अपना प्रतिनिधित्व प्राप्त करती हैं। उपकक्षाएं जिस भी माप में रहें, उनका क्षेत्रफल सदा $A_e = \pi ab = \pi a_0 b_0 nk = A_0 nk$ होना चाहिए, जिससे यह निरूपित किया जा सकता है कि जैसे-जैसे k का मान बढ़ेगा वैसे ही उपकक्षाएं के आकार फैलते चले जाएंगे, n के किसी भी निश्चित मान के लिए, साथ ही k के मान में वृद्धि के साथ, कक्षा की अण्डाकारता कम हो जाती है। जब $n = k$, तब कक्षा वृत्ताकार होती है। इसी सामान्य तर्क को आगे बढ़ाने पर यह भी आभास होता है कि जितना ज्यादा nk, उतना अधिक उपकक्षाओं का आकार विस्तृत होनी चाहिए, तथा विशुद्ध कल्पना के अनुसार ये सभी सोमरफेल्ड की कक्षाएं एक आम सतह में विन्यस्त होनी चाहिए।

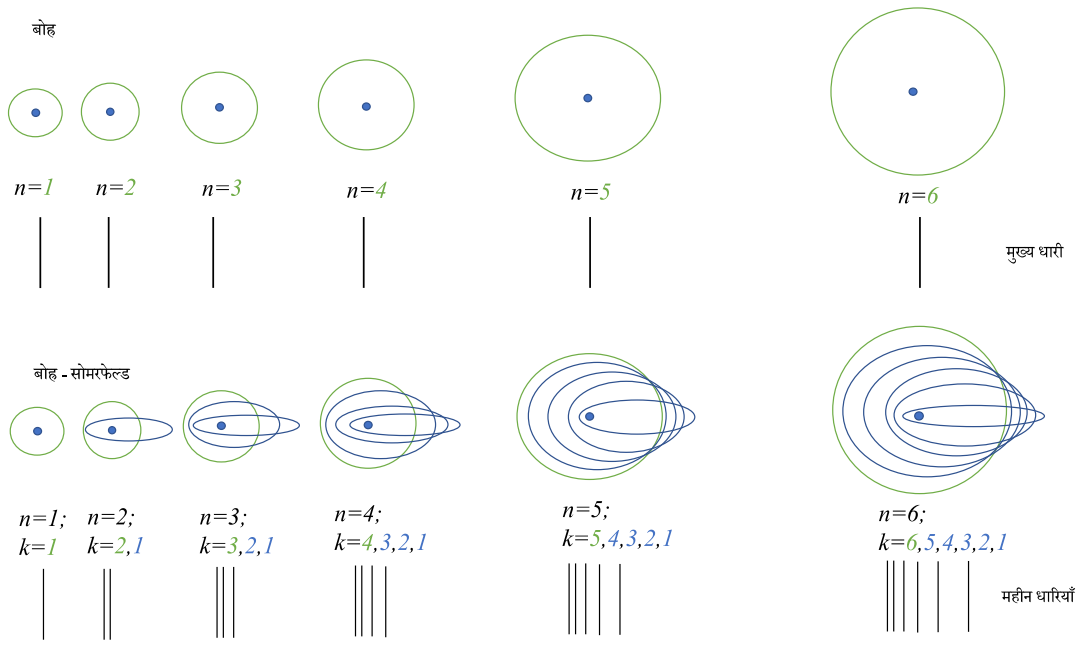

चित्र 1.1: हम बोह्र एवं सोमरफेल्ड के परिणामों को तुलनात्मक रूप से देख सकते हैं की किस प्रकार से वर्णपट्टी की धारियाँ, प्रमात्रिक संख्याओं तथा कक्षाओं मे स्वतः सामंजस्य विद्यमान हैं।

अब हम 1921 में बोह्र-बरी नियम को याद करते है जो कहती हैं कि एक कक्षा में मौजूद ऋणुओं की अधिकतम संख्या सूत्र $2n^2$ हो सकती है। अब थोड़े ध्यान से ये अवलोकन (ऑब्जर्वेशन) कीजिए, अगर हम यह माने होते कि एक उपकक्षा में एक ही ऋणु गतिशील हो, तब चूंकि किसी भी n के कुल n विभिन्न k वाली उपकक्षाएं रहती है, अतः उन सब को मिलाकर उनमें केवल n ऋणुएं होनी चाहिए , किन्तु बोह्र-बरी के नियमानुसार हमारे सोच से अत्यधिक संख्या में किसी उपकक्षा में ऋणु की $(\times 2n)$ और मौजूदगी प्रतीत होती है, इससे यह समझ आता है कि एक उपकक्षा में हमारे सोच से $(\times 2n)$ अधिक ऋणु गतिशील है, पर क्यों और कैसे?, ये $2 \times n$ से ही जायदा

क्यों है? क्या उपकक्षाओं के अंदर भी n अल्प कक्षाएं भी है? फिर उनके अन्दर भी दो वर्ग तो नहीं ?, या कि उपकक्षाओं का संयोजन $2n$ अल्प कक्षाएं से होता हैं आदि इत्यादि संभावनाएं है? किन्तु ऐसे अनुमान समाप्त नहीं होंगे। हम आगे देखते हैं कि इस मामले का निपटारा कैसे किया जा सकता है। अभी चित्र (1.1) में बस इतना देखिए कि किस प्रकार सोमरफेल्ड ने विभिन्न k के मान के लिए उपकक्षाओं के सजे रहने का प्रारूप दिया था।

वर्ष 1919 तक परमाणु में उसके ऋणुओं की व्यवस्थाओं का यह एक काफी सुंदर चित्रण प्राप्त हो गया था। कुछ प्रश्न थे जो बचे रह गए जिस के उत्तर मिल नहीं रहे थे, उदाहरण के लिए हम अब तक नहीं जान पाए कि यह प्रमात्रिक शर्ते आखिर क्यों है, क्यों ही ऋणु केंद्रक से एक खास-खास निश्चित दूरियों पर गतिमान रहेंगे? और क्या सचमुच में सोमरफेल्ड ने ऐसे ही अपने कार्य को अंजाम दिया था ? ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो कार्य इस प्रकार घटित नहीं हुए थे, बल्कि जिस तरह से हम इनका अध्ययन करते हैं उसमें आवश्यक बदलाव निहित होते हैं। मैं यहां संक्षेप में आपको उनके कार्यों से परिचित कराने का प्रयास करता हूं, प्राचीन भौतिकी में जब हम हैमिल्टन-जैकोबी के समीकरणों का अध्ययन कर रहे होते हैं (समीकरण (1.14)), तंत्र के आवधिक गति के व्यक्त करने के लिए तो तब हमारा परिचय $J_k \equiv \oint p_k\, dq_k$, जहां J_k को सामान्यीकृत कोणीय चर (ऐंगल वेरियाबल) कहते है, उससे होता है । यही सूत्र प्रमात्रिक यांत्रिकी में विल्सन-सोमरफेल्ड द्वारा $\oint p_k\, dq_k = nh$ हो जाता हैं। सन् 1916 में इसी को आधार बनाकर उन्होंने हाइड्रोजन परमाणु मे ऋणु की गतिकी को व्यवहारित करने का प्रयास किया, जहां अगर कक्षा मे ऋणु को चिन्हित करने के लिए त्रिज्य दूरी (रैडीअल डिस्टन्स) r, कोणीय स्थिति θ हो, तब $\oint p_r dr = n_r h$ तथा $\oint p_\theta d\theta = n_\theta h$ होती हैं, हम इसी $n_\theta = k$ कह रहें थे, तथा मुख्य n एवं n_r में नाममात्र का भेद हैं, मामला यह है की $n = n_\theta + n_r$ सिद्ध रहे, उदाहरण हेतु $n = 3$ के लिए क्रमशः $n_\theta = \{1, 2, 3\}$ तथा $n_r = \{2, 1, 0\}$ ही होगी , तभी किसी समान स्थान के तत्व का योग सर्वदा $n_\theta + n_r = 3$ ही रहेगा। अब अगर हम इन सभी सूत्र तथा प्राचीन भौतिकी की सहायता से ऋणु के कक्षाओं परिक्रमा पथ व निहित ऊर्जा को ज्ञात करे तो हमें, उसकी ऊर्जा समीकरण (1.1) ही मिलती हैं, अर्थात् $E = -\frac{me^4}{32n^2\pi^2\varepsilon_0^2\hbar^2}$, जो की बोह्र द्वारा दिए गए सूत्र के समान है। आप कह सकते है कि सोमरफेल्ड ने मुख्य रूप से दो प्रयास किए थे। प्रथम प्रयास में प्रत्येक n के लिए निश्चित उपकक्षाएं (सोमरफेल्ड कक्षा) मिली, उनका विन्यास व्यक्त किया गया (चित्र 1.1 देखे), तथा कक्षाओं की ऊर्जा प्राप्त हुई, किन्तु जिनसे वर्णपट्टी के महीन धारियों को समझाया नहीं जा सकता था। क्योंकि, परमाणु की कुल ऊर्जा कुल प्रमात्रिक संख्या (क्वांटम नंबर) n पर निर्भर कर रही थी और सभी अण्डाकार कक्षाओं के लिए समान मान रखती थी, अण्डाकार कक्षा की अवधारणा से हाइड्रोजन परमाणु के लिए किसी दिए गए कुल प्रमात्रिक संख्या के अनुरूप एक कक्षा में अन्य नए ऊर्जा स्तरों का उत्पादन नहीं होता था , इसका अर्थ हुआ की सभी उपकक्षाएं की ऊर्जा एकसमान हो।

दूसरे प्रयास में इन्हीं सभी चीजों में सुधार किया गया। तब हमें उपकक्षाओं का विन्यास प्राप्त होता है, तथा उन सभी के लिए ऊर्जा का समीकरण उपर्युक्त सूत्र (1.2) तथा (1.3) ही हैं। जिसे प्राप्त करने के लिए सोमरफेल्ड ने सापेक्षता के सिद्धांत तथा केप्लर के नियमों का सहारा लिया। कक्षाएं जब अंडाकार हों तो कोई भी कण जब केंद्र के नजदीक रहेगा तो वह धीमे गतिमान होगा तथा दूर रहने पर उसकी गति तीव्र हो जाएगी। इस आधार से कण (ऋणु) का द्रव्यमान सापेक्षित हो जाएगा, जिसके फलस्वरूप हमें नवीन ऊर्जा स्त्रोत प्राप्त होते हैं। यही सभी ऊर्जाएं वर्णपट्टी पर महीन धारियों के रूप में प्रतिबिंबित (प्रकट) होती है। मतलब यह कि कक्षाएं एक निश्चित अंडाकार आकृति में ना होकर, वे मुख्यत: अंडाकार छल्लों की तरह केंद्रक को चारों तरफ़ से द्वितीय आयाम में घेरे हुए थे (चित्र 1.2 देखें), जैसे बुध की कक्षा सूर्य के प्रभाव से पुरस्सरण (प्रीसेशन) नामक घटना को अंजाम देती है। वैज्ञानिकों का मानना है कि ऋणु की उपकक्षाएं भी उत्पलनुमा गति (रोज़ेट गति) करतीं हैं। इन सभी चीजों ने परमाणु की संरचना को और जटिल बना दिया। अतः एक ऋणु केंद्रक की परिक्रमा तो कर रहा था किन्तु उसकी कक्षाएं भी पुरस्सरण कर रही थी। साफ शब्दों में कहें तो वह वैज्ञानिक सोमरफेल्ड ही थे जिनके अनुसार, ऋणु का वेग अधिकतम होता है, जब ऋणु नाभिक के सबसे निकट होता है और न्यूनतम जब यह नाभिक से सबसे दूर होता है, क्योंकि ऋणु की

कक्षा अण्डाकार होती है। इसका तात्पर्य यह है कि ऋणु का द्रव्यमान उसकी कक्षा के विभिन्न भागों में भिन्न होगा। ऋणु के द्रव्यमान के सापेक्ष भिन्नता को ध्यान में रखते हुए, सोमरफेल्ड ने अपने सिद्धांत को संशोधित किया और दिखाया कि ऋणु का मार्ग एक साधारण दीर्घवृत्त नहीं है, बल्कि एक पुरस्सरण करता दीर्घवृत्त है जिसे उत्पलनुमा कहा जाता है और प्रतीक अंडाकार छल्ले की ओर जहां विभिन्न होगी जो वर्णपट्टी की महीन धारियों द्वारा अपना प्रतिनिधित्व प्राप्त करता है।

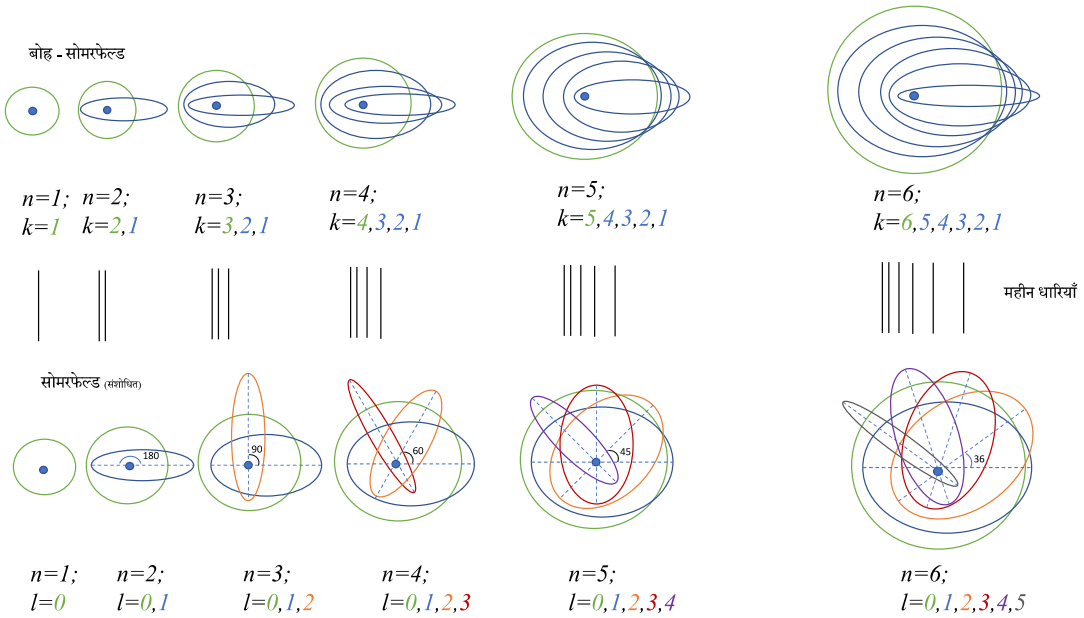

चित्र 1.2: हम सोमरफेल्ड द्वारा ज्ञात संशोधित कक्षाओं के विन्यास द्वि आयामी सतह मे परिकल्पित कर सकते हैं, कि किस प्रकार वर्णपट्टी के महीन धारियों की उर्जाओं के अनुरूपतापूर्वक उनकी उपकक्षाएं मिलती है।

वैज्ञानिक पीटर ज़ीमैन सदा माइकल फैराडे के प्रायोगिक कार्यों से प्रेरित रहे। उदाहरण स्वरूप उनके एक प्रयोग का उद्देश्य यह था कि प्रकाश से प्राप्त वर्णपट्टी की धारियों की स्थिति तथा प्रद्युत क्षेत्र (मैग्नेटिक फील्ड) के मध्य किसी प्रकार की कड़ी होनी चाहिए। ऐसा इसलिए, क्योंकि उन्हें यह बात पता था की सन् 1862 में फैराडे ने अपर्याप्त उपकरणो के कारण एक असफल प्रयोग किया था, जहां बाहरी प्रद्युत क्षेत्र की उपस्थिति में प्रकाश में कुछ परिवर्तन या उससे प्राप्त वर्णपट्टी की धारियों में कुछ परिवर्तन होनी की परिकल्पना थी। जिसे ज़ीमैन ने सन् 1896 में उसी घटना का अध्ययन करने के लिए एक बेहतर उपकरण का इस्तेमाल किया, 1897 में अपने परिणाम प्रकाशित किए, जिससे यह विदित हुआ की बाहरी प्रद्युत क्षेत्र की उपस्थिति में वर्णपट्टी की मुख्य धारियाँ मुख्य रूप से तीन वर्ण रेखाओं में विभक्त होती हैं, जिन्हें और भी निकट से देखने पर अत्यंत महीन धारियाँ (हाइपर फाइन लाइंस) प्राप्त होती हैं। इसे साधारण ज़ीमैन प्रभाव (नॉर्मल ज़ीमैन इफेक्ट) कहा जाता है। उसी वर्ष (1897) प्रेस्टन नाम के वैज्ञानिक ने अप्रकृत ज़ीमैन प्रभाव (अनॉमलऔस ज़ीमैन इफेक्ट) के बारे मे सूचित किया। जहां उन्होंने यह दर्शाया की बाहरी प्रद्युत क्षेत्र की उपस्थिति में वर्णपट्टी की महीन धारियाँ मुख्य रूप से दो वर्ण रेखाओं में विभक्त

होती हैं जिन्हें और भी निकट से देखने पर भी अत्यंत महीन धारियों में प्रकट होती हैं।

हेंड्रिक लोरेंत्ज़ो ने उन्ही शुरुवाती वर्षों में साधारण ज़ीमैन प्रभाव का सैद्धांतिक आधार विकसित किया, जिसे को आगे चलकर सोमरफेल्ड ने प्रमात्रिक पूर्णता प्रदान की। निष्कर्ष यह निकल कर आया कि किसी भी एक n के मान के लिए $2l+1$ संख्या में अत्यंत महीन धारियां प्राप्त होगी। आप ध्यान दीजिए कि $2l+1 = l+1+l$ भी होता हैं, अतः एक कक्षा, माध्यमिक अवस्था में सर्वप्रथम तीन उपकक्षाओं में विभक्त होनी चाहिए, जिसमें दो l गुण वाली प्रत्येक उपकक्षाएं (वर्णपट्टी पर σ रेखा) अन्य l कलाओं में दृश्यमान होगी, तथा शेष 1 अपरिवर्तित उपकक्षा (π रेखा) रहेगी, इस प्रकार कुल कलाओं की संख्या $2l+1$ होगी। यह भी ध्यान दें की अगर कोई संख्या x है, तो $\{-x, -(x-1), \cdots -1, 0, 1, \ldots, (x-1), x\}$ में कुल तत्वों की संख्या $2x+1$ होती हैं, एवं हम प्रत्येक तत्व (अवयव) को m_x द्वारा सूचित करेंगे। अतः हम कह सकते हैं कि प्रत्येक l मान वाली उपकक्षा कुल $\{-l, \cdots -1, 0, 1, \ldots, l\} \equiv 2l+1$ प्र-उपकक्षाओं (डिस्क्रिट सबऑर्बिट्स) में पुनः विभक्त होगी, अतः कुल m_l की संख्या $2l+1$ होगी। हमें यह प्रश्न पूछना चाहिए क्या यही प्र-उपकक्षाएं वर्णपट्टी पर अत्यंत महीन धारियों द्वारा अपना प्रतिनिधित्व प्राप्त करती है? तो उत्तर है, हां , चित्र 1.3 देखें , तथा उसकी अंतर उर्जा का सूत्र $\Delta E = m_l \frac{e\hbar}{2m} B$ मिलती है, जहां $\hbar$ न्यून प्लैंक नियतांक है तथा e व m ऋणु के आवेश व द्रव्यमान हैं।

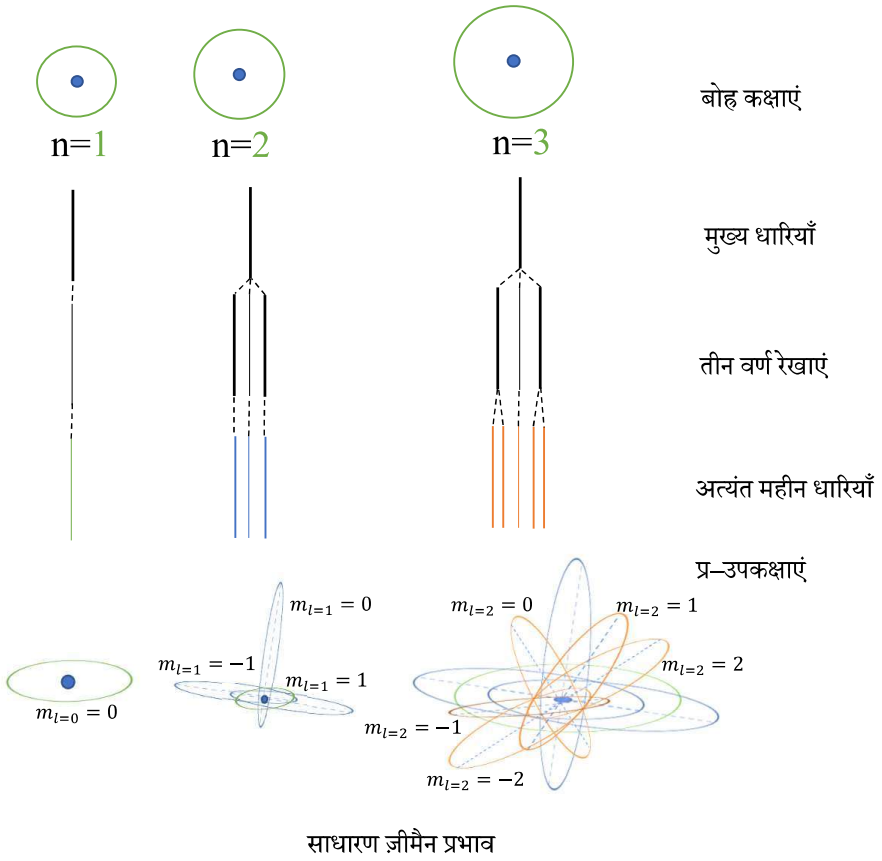

चित्र 1.3: त्रि-आयामी स्थान में कक्षाओं का प्रमात्रिक प्र-उपकक्षा में विभक्तिकरण, जो अत्यंत महीन धारियां के होने के लिए उत्तरदायी हैं।

अब हम पुनः बोह्र-बरी नियम का स्मरण करते हैं, तथा अब जितनी भी जानकारी हुई हैं, उसके आधार पर कुल ऋणुओं की संख्या पता करते हैं, जहां पहले हम $\times 2n$ ऋणु कम पता कर पा रहे थे नियम की तुलना में, अब हम पुनः प्रयास करते हैं। अगर प्रत्येक प्र-उपकक्षा में एक ऋणु को गतिमान माना जाए तब किसी भी n मान के लिए

$$\begin{aligned}\sum_{l=0}^{n-1} m_l &= \sum_{l=0}^{n-1}(2l+1) \\ &= [1+3+5+\cdots+(2n-1)] \\ &= [\frac{n}{2}(1+(2n-1)] \\ &= n^2 \neq 2n^2\end{aligned} \tag{1.5}$$

इस प्रयास में भी हम लोग असफल रहे। इसका अर्थ अब क्या लगाया जाए, क्या हमारी सोच से दोगुनी ऋणु एक कक्षा में गतिमान है या प्रत्येक प्र-उपकक्षाएं दो वर्ग में विभक्त होंगी? इन दोनों में से कौन-सी स्थिति यथार्थ हैं, इसका निर्णय हम आगे के प्रयासों में करेंगे।

वहीं अप्रकृत ज़ीमैन प्रभाव के विषय में कुछ जानने का प्रयास करे तो पता यह चलेगा कि वहां भी पूर्व के समीकरण (1.4) के भांति संख्या j का अमूल्य योगदान दिखता है, जोकि अनुरूप है साधारण ज़ीमैन प्रभाव के l से, अर्थात् यहां (अप्रकृत) कुल अत्यंत महीन धारियों की संख्या $2j+1$ होती है, और यह $(j+\frac{3}{2})+(j-\frac{1}{2})$ के रूप में विभक्त समझी जा सकती है, क्योंकि हमें प्रद्युत क्षेत्र की उपस्थिति में महीन धारियों से दो माध्यमिक वर्णरेखा देखने को मिलती है, जिनकी तीव्रता एकसमान नहीं होती है, जिन्हें और करीब से देखा जाए तो (अप्रकृत) अत्यंत महीन धारियां मिलेगी जिनकी कुल संख्या, प्रत्येक j के मान के लिए एक विशेष संख्या m_j का मान $\{-j,-(j-1),\ldots,-\frac{1}{2},\frac{1}{2},\ldots,j-1,j\} \equiv 2j+1$ होगी, आपने देखा की जिस प्रकार l के लिए m_l होती थी, जो कि पूर्णांक संख्याएं होती थी, वही यहां j के लिए m_j होती हैं, किंतु वे शून्यरहित अर्धपूर्णांक संख्याएं हैं। किंतु एक अनुत्तरित प्रश्न यह है कि जिस प्रकार l और m_l क्रमशः विभिन्न कक्षाएं तथा प्र-उपकक्षाएँ की अनुभूति प्रदान कर रही थी तब वही ये j और m_j आखिर किस स्वरूप का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं?

इसी के मध्य सन् 1922 स्टर्न-गेरलाच के प्रयोग ने प्रदर्शित किया कि कोणीय संवेग के स्थानिक अभिविन्यास (स्पेटियल ऑरिइंटेशन) में भी प्रमात्रिक्ता है, प्राचीन भौतिक के शब्दों में व्यक्त करे तो ऋणु स्वत अपने धुरी में घूर्णन कर रही, लेकिन इसका मान केवल दो ही तरह के है, अर्थात् ये प्रमात्रिक गुण है, किन्तु वास्तविकता में ऋणु का अपने धुरी में घूर्णन करना सम्भव नहीं है, वैदिक शब्दों में कहे तो नेति-नेति वाली स्थिति है। वास्तव में उन्होंने जो देखा वह यह था कि चांदी के परमाणुओं का प्रद्युत आघूर्ण (मैग्नेटिक मोमेंट) केवल दो स्थिति (मान) ले सकता है, न कि एक सतत मान जिसकी अपेक्षा की गई थी, अतः अब से प्रद्युत आघूर्ण में भी प्रमात्रिक्ता है।

अगर आपने ध्यान दिया हैं, तो अभी तक हमने कुछ उपर्युक्त विषयों पर विस्तृत रूप से बातें करने में परहेज किया हैं। उदाहरण स्वरूप पूर्व के समीकरण (1.4) में संख्या j की मौजूदगी का अर्थ, अप्रकृत ज़ीमैन प्रभाव का कारण, बोह्र-बोरी नियम से लगातार सहमति न होने पाने को वजह, स्टर्न-गेरलाच के प्रयोग का सार्थक विवरण। क्या प्रकृति हमें इस बात का एहसास कराना चाहती है कि ये चारों बातें एक ही अवधारणा को इंगित कर रही हैं? किन्तु बोह्र-बोरी नियम (1.5) तथा स्टर्न-गेरलाच प्रयोग में कुछ ऐसा छुपा है जो "2" की जरूरत महसूस करवा रहा है, वहीं अप्रकृत ज़ीमैन प्रभाव तथा पूर्व के समीकरण (1.4) में संख्या j का रहस्य विद्यमान हैं। नील्स बोह्र, सोमरफेल्ड, पाउली, क्रामर्स , हाइजेनबर्ग, अल्फ्रेड लैंड, श्रोडिंगर, डिराक आदि भौतिकशास्त्रियों ने अपने-अपने कालखण्ड में अप्रकृत ज़ीमैन प्रभाव की समस्या पर नज़र दौड़ाई।

ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो अल्फ्रेड लैंड ऐसे वैज्ञानिक थे जिन्होंने इस समस्या को हल करने के लिए सबसे अच्छा प्रयास किया, जहां एक ओर नील्स बोह्र और सोमेरफेल्ड के अवधारणाएं अपर्याप्त प्रतीत हो रहे थे, वही लैंड ने अपनी कुछ ऐसी परिकल्पनाएं प्रस्तुत करते हैं, जैसे कि वह प्राचीन भौतिकी के अवधारणाओं और दूर जा रहें हो, किंतु वे कार्यशील परिकल्पनाएं काफी उपयोगी सिद्ध हो रही थी। उनकी निम्नलिखित परिकल्पनाएं इस प्रकार हैं,

1. ऐसे परमाणु, जिनमें ऋणु की संख्या एक से अधिक है, उनके कोणीय संवेग सदा एक सदिश रूप अर्थात् शर (वेक्टर) से संयोजित होते हैं, तथा शर का प्रक्षेपण बाहरी प्रद्युत क्षेत्र के प्रभाव से स्थानिक प्रमात्रिक नियमों का पालन करता है।

2. परमाणु की कोणीय संवेग की प्रमात्रिक संख्याएँ अर्ध-पूर्णांक मान ले सकती हैं।

3. ऋणु की कोणीय संवेग का व्यवहार शास्त्रीय विद्युतगतिकी के नियमों का पालन नहीं करता है।

इसी बीच लैंड के प्रयासों से प्रभावित होकर हाइजेनबर्ग (एवं क्रामर्स) ने यह समझ रखी कि अगर हम इन समस्याओं को समझना चाहें, तो पूर्व में कुछ खास प्रमात्रिक संख्याओं को अलग-अलग ना व्यक्त कर उन्हें एक युग्म के रूप में प्रस्तुत करें, तब हम चीजों को बेहतर ढंग से समझ सकते है। उनका मानना था कि इस परिवर्तन से अप्रकृत ज़ीमैन प्रभाव को हल किया जा सकता है। यह काफी रोचक बात है कि उस समय हाइजेनबर्ग इस बात से अनजान थे कि समस्या वास्तविक रूप में सिद्धांत (जिसके लिए यह परिवर्तन हो रहा था) से संबंधित ना होकर, बल्कि मुख्य रूप से एक “विशेष प्रकार की अवधारणा” (जिसे खोजा जाना शेष है) के कमी के कारण है। अतः इस परिवर्तन का परिणाम यह हुआ, पूर्व में जिस प्रमात्रिक संख्या j की चर्चा की गई थी, उसके अब दो मान ज्ञात किए गए, $j+\frac{1}{2}$ तथा $j-\frac{1}{2}$ अगर, परमाणु की कुल कोणीय संवेग का मान $j\hbar$ हो। इस कार्य से काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया, जिसके कारण पहले जो समस्या "2" के रहस्य में और j के मध्य प्रतीत हो रही थी, अब उनका मेल हो गया, अर्थात सभी एक ही अवधारणा को इंगित कर रहे है। यही समय था जब उहलेनबेक और गौडस्मिट ने यह सुझाव दिया कि शायद स्टर्न-गेरलाच के प्रयोग का सार्थक विवरण तभी प्राप्त हो सकता है, जब हम एक नई प्रमात्रिक संख्या का अस्तित्व स्वीकार करते हैं, साथ ही यह प्रयोग इसी नई प्रमात्रिक संख्या के प्रभाव को तथा उस “विशेष प्रकार की अवधारणा” सूचित करता है, जिसका मान $m_s=+\frac{1}{2}$ और $m_s=-\frac{1}{2}$ है और शायद यही नई प्रमात्रिक संख्या m_s के दो मान थे, जिसके योगदान को व्यक्त करने के लिए हाइजेनबर्ग j में अज्ञातवश परिवर्तन कर रहे थे। इस नए प्राकृतिक गुण को बाद में पाउली द्वारा “स्पिन” (प्रमात्रिक घूर्णम) कहा गया था, हालांकि, इस परिकल्पना में किसी कण का अपनी धुरी पर घूमती होने की संभावना नहीं है। इस नई गुण को द्रव्यमान और आवेश जैसे आंतरिक गुणों के रूप में देखा जाना चाहिए। ध्यान दें कि, द्रव्यमान और आवेश के विपरीत, घूर्णम हेतु कोई शास्त्रीय अनुरूपता नहीं है!

इस प्रकार से अब पुनः समीकरण (1.5) को संशोधित करते हैं, तब

$$\begin{aligned}\sum_{l=0}^{n-1} 2(2l+1) &= 2[1+3+5+\cdots+(2n-1)] \\ &= 2[\frac{n}{2}(1+(2n-1)] = 2n^2\end{aligned} \tag{1.6}$$

अतः यह बोह्र-बरी नियम के अनुरूप है।

यह हो सकता है की चीजें हमें समझ में नहीं आ रही हो, एक बात ध्यान रखें कि वैज्ञानिकों ने सबसे पहले यह बात ज्ञात किया कि ऋणु में कोणीय संवेग होता है और इस कोणीय संवेग को हम दो रूपों में विभक्त करते हैं, जो शर के नियम का पालन करती हैं। प्रथम मुख्य भाग "उपकक्षीय कोणीय संवेग" कहलाता है एवं द्वितीय भाग को "आंतरिक कोणीय संवेग" कहते है। पहले का मान $|\vec{l}| = \sqrt{l(l+1)}\hbar$ होगा , तब केवल l को "उपकक्षीय प्रमात्रिक संख्या" कहेंगे एवं इससे ही संबंधित ऋणु के कक्षा/ उपकक्षा की प्रद्युत आघूर्ण का मान $\vec{\mu}_l = -\left(\frac{e}{2m}\right)\vec{l}$ प्राप्त होती हैं। अब आगे चलकर यह पाया गया की इस $\vec{l}$ शर का विन्यास में भी प्रमात्रिक्ता है, अतः इसको व्यक्त करने के लिए उपकक्षीय कोणीय संवेग के शर को किसी एक अक्ष (z) पर प्रक्षेपित कर किया जाता है, जिसका $|\vec{l_z}| = m_l\hbar$ मान होता है, यह m_l ही प्र-उपकक्षाओं के लिए तद्विषयक होता है। इस प्रकार कोणीय संवेग के दूसरे भाग में ऋणु के प्रमात्रिक घूर्णम के कारण जो आंतरिक कोणीय संवेग विद्यमान है, उसका मान $|\vec{s}| = \sqrt{s(s+1)}\hbar$ होना चाहिए तब केवल s को " घूर्णम प्रमात्रिक संख्या" कहेंगे एवं इससे ही संबंधित ऋणु के घूर्णम की प्रद्युत आघूर्ण का मान $\mu_s = -\left(\frac{e}{2m}\right)\vec{s}$ होती हैं। अब यहाँ भी उसके शर के किसी एक अक्ष (z) पर प्रक्षेपित कर प्राप्त मान $|\vec{s_z}| = m_s\hbar = \pm\frac{1}{2}\hbar$ होगा। अब प्रश्न यह पूछना चाहिए कि "प्रद्युत घूर्णम संख्या", m_s किसके के लिए तद्विषयक है, उसका चित्रण कैसे हो? और इसी प्रश्न का उत्तर पूर्व प्रमात्रिक यांत्रिकी के पास नहीं था।

जिस प्रकार हम पूर्व से अंतर ऊर्जा के सूत्र तथा कोणीय संवेग के सूत्र लिखते चले आ रहे थे, तो इस विशेष स्थिति में वे सूत्र क्रमशः इस प्रकार रहेंगे,

$$\Delta E_{ls} = \frac{1}{2}\left(\frac{Ze^2}{4\pi\varepsilon_0 m^2c^2}\frac{1}{r^3}\right)(\vec{l}\cdot\vec{s}) \tag{1.7}$$

एवं

$$|\vec{J}| = |\vec{L} \oplus \vec{S}| = \sqrt{J(J+1)}\hbar \tag{1.8}$$

जहां J को कुल कोणीय प्रमात्रिक संख्या कहते है। हमें इस बात की चिंता नहीं करनी है कि यह सूत्र कैसे आए हैं? हमारा मुख्य उद्देश्य प्रमात्रिक गतिकी को समझना है ना कि इन्हे। जिज्ञासावश इतना हमें ध्यान होना चाहिए कि यह कार्य मुख्य रूप से रुसेल , सॉन्डर्स तथा लैंड द्वारा संपूर्ण किया गया था।

इसी बीच आज से लगभग एक शताब्दी पूर्व यह पता चला कि ऋणु भी प्रकाश के भांति द्वैत (डुऍल) स्वरूप रखतीं है, अर्थात् वह कण और तरंग के समान व्यवहार कर सकती है, ये मुख्य बात थी जिसे सन् 1925 को डी-ब्रॉय ने बताया था। अगर हम ऋणु को एक स्थिर तरंग के रूप में देखते है तो, केवल उन परमाणु कक्षाओं को स्थिर कक्षाओं के रूप में मान्यता दी जाती है जिन के ऋणु-कक्षा की परिधि का मान डी-ब्रॉय तरंगदैर्ध्य (वेब्लैंथ) का अभिन्न गुणज है, यह डी-ब्रॉय के प्रमात्रिक शर्त थी। डी-ब्रॉय ने एक सूत्र दिया जिसकी सहायता से हम किसी भी द्रव्यमान के साथ जुड़ी हुई उसकी अपनी तरंगदैर्ध्य का मान निकाल सकते हैं, $\lambda = \frac{h}{mv}$, जहां हम λ को डी-ब्रॉय तरंगदैर्ध्य या प्रदार्थ तरंगदैर्ध्य कहते हैं।

ज़रा कुछ गणना करते हैं। अगर, बोह्र की प्रमात्रिक शर्त के अनुसार "केवल उन सभी कक्षाओं को स्थिर कक्षाओं के रूप में मान्यता दी जाती है जिनमें एक ऋणु का कोणीय संवेग $\frac{h}{2\pi}$ का अभिन्न गुणज होता है।" यदि m ऋणु का द्रव्यमान, v वेग और स्थिर कक्षा का r त्रिज्या है, तो $L = mvr$ कोणीय संवेग है। बोह्र की प्रमात्रिक शर्त के अनुसार,

$$mvr = n\frac{h}{2\pi}$$

डी-ब्रॉय के प्रमात्रिक शर्त के अनुसार,

$$2\pi r = n\lambda \tag{1.9}$$

ऋणु का डी-ब्रॉय तरंगदैर्ध्य , $\lambda = \frac{h}{mv}$ इस मान को सूत्र (1.9) में रखने पर हमें प्राप्त होता है,

$$2\pi r = n\frac{h}{mv}$$

$$\Rightarrow mvr = L = n\frac{h}{2\pi} = n\hbar$$

यह बोह्र की प्रमात्रिक शर्त ही है।

हम देख सकते हैं कि डी-ब्रॉय के प्रमात्रिक शर्त ने ना केवल हमें n के विषय में समझाया कि आख़िर क्यों कोई ऋणु केंद्रक से एक खास-खास निश्चित दूरियों पर गतिमान रहेंगे या उनकी कक्षाएं मौजूद मिलेंगी, साथ ही बोह्र की प्रमात्रिक शर्त को सुस्पष्ट भी किया। अबतक हमनें जितना देखा और जाना वह निर्धारणात्मक प्रमात्रिक भौतिकी थी; प्रमात्रिक इसलिए क्योंकि यहां सभी भौतिक राशियां के मान केवल निश्चित संख्या अर्थात् किसी मान का अभिन्न गुणज ही हो सकता है, मतलब राशियां का मूल्य अनिरंतर है; निर्धारणात्मक शब्द इसलिए क्योंकि हमने इस चर्चा के दौरान ऋणु को एक बिन्दु या प्राचीन भौतिक वस्तु की तरह माना है, ताकि उसका गति, स्थान, ऊर्जा, कक्षा आदि को कोई भी गणना द्वारा किसी भावी काल में जान सकें। उसके भूत और भविष्य को भी गणितीय गणनाएं द्वारा जाना जा सकें हैं वह भी मनचाहे स्पष्टता से साथ, अर्थात् हमारा यह तन्त्र निर्धारणात्मक है।
अब डी-ब्रॉय ने जो छवि दिखाई है, उससे ऋणु के स्थान या गति का निर्धारण एक साथ करना असंभव-सा प्रतीत होता है, क्योंकि उनके अनुसार हर वस्तु की प्रकृति अब तरंग-सी है। वस्तु जितनी सूक्ष्म होगी, कम द्रव्यमान या जितनी तेज गतिमान होगी, उसके सम्बन्धित तरंग उतना ही तीव्र होती है। वह लहराती हुई है कुछ सीमित क्षेत्र में द्रव्य तरंग (मैटर वैव), हमें ऋणु का वृहत स्वरूप दिखाता है। ये हमें प्रेरित करता है कि हम अपनी भाषा में परिवर्तन करे, निश्चित को वृहत से बदले, निर्धारणात्मक गणनाएं को प्रसम्भाव्यात्मक या प्रायिकता में हल करें। अब हम गैर-निर्धारणात्मक प्रमात्रिक भौतिकी की तरफ जा रहे हैं। पर ठहरिय, इतनी सरलता से भावनाओ में बहकर हम वैज्ञानिक दृष्टि अर्जित नहीं करते हैं, हमें और ठोस आधार की मांग करनी चाहिए।

1.2 प्राचीन भौतिकी का स्मरण

उस ठोस आधार की मांग को पूरा करने के लिए हम प्राचीन भौतिकी को टटोलते है। प्राचीन भौतिकी का पूरा तामझाम इस बात पर निर्भर करता है कि किसी भी तंत्र को मनचाहे स्पष्टता के साथ मापा जा सकता है, तथा उसके आने वाली स्थिति का निर्धारण भी किया जा सकता है। हमें यह बात याद करनी चाहिए की जब न्यूटन की यांत्रिकी को संशोधित किया जा रहा था, तब उस काल में मुख्य रूप से ऑइलर, लग्रेंज एवं हैमिल्टन के कार्यों ने सबसे ज्यादा प्रभावित किया। जैसे कि आपको संभवत: ज्ञात होगा कि ऑइलर-लग्रेंज के समीकरण द्वितीयक्रम के अवकलन समीकरण (सैकंड ऑर्डर डिफरेंशियल इक्वेशन) थे। जैसा कि द्वितीयक्रम के अवकलन समीकरणों को हल करना सरल नहीं माना जाता, इसलिए सुधार की दूसरी मुख्य कोशिश हैमिल्टन ने की, परिणामस्वरूप उन्होंने प्रथमक्रम के अवकलन समीकरण प्रदान किए, इसके साथ-साथ उन्होंने दो अन्य महत्वपूर्ण कार्य किए, पहले हम जिसे किसी भी तन्त्र का लाग्रंगियन $\mathcal{L}$ कहते थे, जो एक फलन होता है और आश्रित चर राशि $\dot{q_k} = \frac{dq_k}{dt}$ में व्यक्त किया जाता है, अर्थात्, $\mathcal{L} = \mathcal{L}(q_k, \dot{q_k}, t)$ । हैमिल्टन ने उसको स्वतन्त्र चर राशियों में प्रस्तुत किया, जिसे आज हम किसी भी तन्त्र का हैमिल्टनियन $\mathcal{H}$ कहते है, ये लिखा जाता है, $\mathcal{H} = \mathcal{H}(q_k, \frac{\partial \mathcal{L}}{\partial \dot{q_k}}, t)$, जहां $\frac{\partial \mathcal{L}}{\partial \dot{q_k}} = p_k$

को संयुग्म संवेग (कंजुगेट मोमेंटम) या सामान्यीकृत संवेग (जेनेरालाइज्ड मोमेंटम) पुकारते हैं, उसी तरह से q_k को सामान्यीकृत निर्देशांक (जेनेरालाइज्ड कोऑर्डिनेट) कहेंगे। $\dot{q}_k$ सामान्यीकृत वेग है, जो सामान्यीकृत निर्देशांक के प्रति दर परिवर्तन को बतलाता है, अर्थात् t समय में सामान्य अवकलज (डेरिवेटिव) है। आप देख सकते है कि जहां एक तरफ़ लाग्रंगियन में निहित सामान्यीकृत वेग एक आश्रित चर है , किन्तु हैमिल्टनियन में सभी चर राशियां स्वतन्त्र अस्तित्व रखतीं है। हमें यह जानना हैं की हैमिल्टनियन को लाग्रंगियन से निगमन कैसे किया जा सकता है? हम सर्वप्रथम $\mathcal{L} = \mathcal{L}(q_k, \dot{q}_k, t)$ का उपयोग करते हुए, समय में सामान्य अवकलन करते हैं,

$$\begin{aligned}
\frac{d\mathcal{L}}{dt} &= \sum_{k=1}^{\infty}\left(\frac{\partial\mathcal{L}}{\partial q_k}\frac{dq_k}{dt} + \frac{\partial\mathcal{L}}{\partial\dot{q}_k}\frac{d\dot{q}_k}{dt}\right) + \frac{\partial\mathcal{L}}{\partial t}\frac{dt}{dt} \\
&= \sum_{k=1}^{\infty}\left(\frac{d}{dt}\left(\frac{\partial\mathcal{L}}{\partial\dot{q}_k}\right)\dot{q}_k + \frac{\partial\mathcal{L}}{\partial\dot{q}_k}\frac{d\dot{q}_k}{dt}\right) + \frac{\partial\mathcal{L}}{\partial t} \\
&= \sum_{k=1}^{\infty}\frac{d}{dt}\left(\frac{\partial\mathcal{L}}{\partial\dot{q}_k}\dot{q}_k\right) + \frac{\partial\mathcal{L}}{\partial t} \\
&= \sum_{k=1}^{\infty}\frac{d}{dt}\left(p_k\dot{q}_k\right) + \frac{\partial\mathcal{L}}{\partial t}
\end{aligned}$$

उपर्युक्त में हमनें लग्रेंज के समीकरण $\frac{\partial\mathcal{L}}{\partial q_k} = \frac{d}{dt}\left(\frac{\partial\mathcal{L}}{\partial\dot{q}_k}\right)$ तथा संयुग्म संवेग p_k की गणितीय परिभाषा का प्रयोग किया है। अंत: हमें प्राप्त होता है,

$$\frac{d}{dt}\left[-\mathcal{L} + \sum_{k=1}^{\infty}p_k\dot{q}_k\right] = -\frac{\partial\mathcal{L}}{\partial t}$$

इस प्रकार, जो उपर्युक्त [...] में बन्द है, उसे हम परिभाषित करते हैं,

$$\mathcal{H} = \sum_{k=1}^{\infty}p_k\dot{q}_k - \mathcal{L}(q_k, \dot{q}_k, t) \tag{1.10}$$

अत: $\frac{d\mathcal{H}}{dt} = -\frac{\partial\mathcal{L}}{\partial t}$, प्राप्त होता है। अंतत: किसी भी तन्त्र का हैमिल्टनियन $\mathcal{H} = \mathcal{H}(q_k, p_k, t)$, ऊर्जा फलन होता है, यह तथ्य भी हम जान सकते हैं, चूंकि किसी भी तन्त्र की गतिज ऊर्जा T का संवेग से संबंध $2T = \sum_{k=1}^{\infty}p_k\dot{q}_k$ होती है, अत: $\mathcal{H} = 2T - \mathcal{L} = 2T - (T - V) = T + V$ होगी। जहां V स्थैतिक ऊर्जा है, और हमारा तन्त्र संरक्षित है। अब हमें ये पूछना चाहिए की क्या $\frac{d\mathcal{H}}{dt} = -\frac{\partial\mathcal{L}}{\partial t}$ ही हैमिल्टन के समीकरण हैं, जिनके सहायता से कण की यांत्रिकी की विवेचना की जाती हैं? तो जबाब हैं नहीं, तो हैमिल्टन के वास्तविक गति के प्रथमक्रम के अवकलन समीकरण क्या हैं? हैमिल्टन के अनुसार, उसे प्राप्त करने के लिए हम उपर्युक्त संबंध (1.10), $\mathcal{H}(q_k, p_k, t) = p_k\dot{q}_k - \mathcal{L}(q_k, \dot{q}_k, t)$ में निम्नलिखित बदलाव करते हैं,

सर्वप्रथम हम इस समीकरण का अवकलन ज्ञात करते हैं, एवं पूर्व के भांति ही p_k और $\dot{p}_k$ का इस्तेमाल कर

इसे हल करते हैं,

$$d\mathcal{H}(q_k, p_k, t) = p_k d\dot{q}_k + \dot{q}_k dp_k - d\mathcal{L}(q_k, \dot{q}_k, t)$$
$$\frac{\partial \mathcal{H}}{\partial q_k} dq_k + \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial p_k} dp_k + \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial t} dt = p_k d\dot{q}_k + \dot{q}_k dp_k - \frac{\partial \mathcal{L}}{\partial q_k} dq_k - \frac{\partial \mathcal{L}}{\partial \dot{q}_k} d\dot{q}_k - \frac{\partial \mathcal{L}}{\partial t} dt$$
$$\frac{\partial \mathcal{H}}{\partial q_k} dq_k + \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial p_k} dp_k + \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial t} dt = p_k d\dot{q}_k + \dot{q}_k dp_k - \dot{p}_k dq_k - p_k d\dot{q}_k - \frac{\partial \mathcal{L}}{\partial t} dt$$

समीकरण के बाएं तथा दाएं गुणज (dq_k, dp_k, dt) की तुलना करने पर, हमें प्राप्त होता हैं,

$$-\dot{p}_k = \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial q_k}, \qquad \dot{q}_k = \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial p_k}, \qquad -\frac{\partial \mathcal{L}}{\partial t} = \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial t} \tag{1.11}$$

ये हैमिल्टन के विहित समीकरण (हैमिल्टन कनानिकल इक्वैशन) हैं, आप देख सकते हैं की किस प्रकार ये सभी प्रथमक्रम के अवकलन समीकरण हैं, तथा स्वतंत्र सामान्यीकृत राशियों मे वर्णित की गई हैं।

अब अगर हमने कोई काल्पनिक फलन या गतिशील चर (डाइनामिक्ल वेरियाबल) $\mathcal{A}(q_k, p_k, t)$ लिया है, तो अब उसका समय मे पूर्ण अवकलन करते हैं,

$$\frac{d\mathcal{A}}{dt} = \frac{\partial \mathcal{A}}{\partial q_k} \dot{q}_k + \frac{\partial \mathcal{A}}{\partial p_k} \dot{p}_k + \frac{\partial \mathcal{A}}{\partial t}$$

अब हम उपर्युक्त हैमिल्टन के विहित समीकरण का उपयोग कर,

$$\frac{d\mathcal{A}}{dt} = \frac{\partial \mathcal{A}}{\partial q_k} \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial p_k} - \frac{\partial \mathcal{A}}{\partial p_k} \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial q_k} + \frac{\partial \mathcal{A}}{\partial t}$$

या,

$$\frac{d\mathcal{A}}{dt} = \{\mathcal{A}, \mathcal{H}\} + \frac{\partial \mathcal{A}}{\partial t} \tag{1.12}$$

यहाँ हमने यह परिभाषित किया कि $\frac{\partial \mathcal{A}}{\partial q_k} \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial p_k} - \frac{\partial \mathcal{A}}{\partial p_k} \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial q_k} = \{\mathcal{A}, \mathcal{H}\}$ है, जिसे प्राचीन भौतिकी में पॉसों कोष्टक (पॉसों ब्रैकेट) कहा जाता है। अब अगर हम यह माने कि $\frac{d\mathcal{A}}{dt} = 0$ तब हमें प्राप्त होता हैं, $\{\mathcal{A}, \mathcal{H}\} = 0$, जिसका अर्थ हुआ की ये दोनों राशियां विनिमेयकारी (कम्यूट) हैं।

अगर हमारे पास सामान्यीकृत राशियों का अलग समुच्चय हो, माना (Q_i, P_i, t) हें। जो की इस प्रकार से पूर्व के सामान्यीकृत राशियों से संबंधित हैं, $Q_i = Q_i(q_k, p_k, t)$, $P_i = P_i(q_k, p_k, t)$ तथा इस समुच्चय के लिए हैमिल्टनियन $\mathcal{K}$ स्वीकारते हैं, तब इसे विहित रूपांतरण (कनानिकल ट्रांसफॉर्मेशन) कहते हैं । अतः इस नवीन समुच्चय के लिए हैमिल्टन के विहित समीकरण होंगे,

$$-\dot{P}_i = \frac{\partial \mathcal{K}}{\partial Q_i}, \qquad \dot{Q}_i = \frac{\partial \mathcal{K}}{\partial P_i}, \qquad \frac{\partial \mathcal{H}}{\partial t} \neq \frac{\partial \mathcal{K}}{\partial t}$$

आप देख सकते है कि $\mathcal{K} \neq \mathcal{H}$, इसे समान करने के लिए हम जनक फलन (जनरेटिंग फंक्शन) $\mathcal{F}$ का उपयोग (आंशिक काल अवकलज, $\partial \mathcal{F}/\partial t$) करते है, जहां यह जनक फलन किसी एक पूर्व राशि (q_k, p_k) एवं

एक नवीन समुच्चय की राशि (Q_i, P_i) तथा समय t का फलन होता हैं, जो कुल चार प्रकार की होती हैं। इसकी सहायता से प्राप्त होता है,

$$\mathcal{K} = \mathcal{H} + \frac{\partial \mathcal{F}}{\partial t} \tag{1.13}$$

आप चाहे तो पूछ सकते हैं कि हम यह सब आखिर क्यों कर रहे हैं? देखिए, प्राचीन भौतिकी के अनुसार अगर हम एक विशेष विहित रूपांतरण को प्राप्त करने में सफल हो जाए, जो $\dot{Q}_i = 0$ तथा $\dot{P}_i = 0$ बना देती हैं। जिससे हमारा भौतिक तंत्र पुनः अपनी आरंभिक स्थिति को हासिल कर लेता है। तब यह सिद्ध की हुई बात है कि हम भौतिक तंत्र की समीकरणों का सरलता से हल कर सकते हैं, जहां हमारा मुख्य कार्य उस विशेष जनक फलन को ज्ञात करना होता हैं। उपर्युक्त शर्तों के फलस्वरूप $\mathcal{K} = 0$ होगा। तब समीकरण (1.13) से यह निम्नलिखित समीकरण मिलता हैं,

$$\mathcal{H} + \frac{\partial \mathcal{F}}{\partial t} = 0$$

जिस प्रकार से हैमिल्टन ने $\frac{\partial \mathcal{L}}{\partial \dot{q}_k} = p_k$ की सहायता से स्वतंत्र राशियों में अवकलन समीकरण को प्रस्तुत किया उसी तरह अब अगर हम $\frac{\partial \mathcal{S}}{\partial q_{k,}} = p_k$ की सहायता से $\mathcal{H}(q_k, p_k, t) \to \mathcal{H}(q_k, \frac{\partial \mathcal{S}}{\partial q_{k,}}, t)$ में निरूपित करते हैं तो, हमने एक ऐसा प्रथमक्रम आंशिक अवकलन समीकरण खोज लिया हैं, जो केवल सामान्यीकृत निर्देशांक तथा समय पर निर्भर करता है। यह $\mathcal{S}$ वह जनक फलन हैं, $(\mathcal{F}_2(q_i, P_i, t) = \mathcal{S}(q_i, P_i, t))$, जिसे भौतिकशास्त्री "हैमिल्टन मुख्य फलन" कहते हैं। इस प्रकार हमें प्राचीन भौतिकी का नया सूत्रीकरण प्राप्त होता हैं, जिसे हैमिल्टन-जैकोबी समीकरण कहते है, वह निम्नलिखित हैं,

$$\mathcal{H}\left(q_k, \frac{\partial \mathcal{S}}{\partial q_{k,}}, t\right) + \frac{\partial \mathcal{S}}{\partial t} = 0 \tag{1.14}$$

अब एक बात थोड़ी-सी सावधानी की है कि यहां जो k आप देख रहे है वह सोमरफेल्ड के k से पूरी तरह से अलग है, क्या ही करे यह परम्परा का तकाज़ा है, ख़ैर सोमरफेल्ड के k को हम दूसरी प्रमात्रिक संख्या या दिगंशीय प्रमात्रिक संख्या कहते है, वहीं यहां वाला जो k हमें यह बता रहा है कि अगर कुल N एक जैसे कणों का तन्त्र है, जिसके विषय में हम जानना चाहते हो, तो हमें कणों की कुल संख्या जानने के बाद, कि वे सभी किस आयाम में कार्यशील रहेंगे, यह पता करना चाहिए, हो सकता है कि ये सभी कण एक रेखा में गतिमान हो, तब $D = 1$ होगा, जिसके कारण कुल निर्देशांकों की संख्या $1N$ मालूम पड़ती है। अगर वे कण त्रिविमीय स्थान में क्रियाशील रह रहे हैं तो आयाम $D = 3$ होगा, जिसके कारण कुल निर्देशांकों की संख्या $3N$ होती है, इसी तरह से वे सभी किसी $D = D$ आयाम में हैं , तब कुल निर्देशांकों की संख्या DN होनी चाहिए और अगर हमें ये पता चलता है कि जिस भी D आयाम में हमारे सभी N क्रियाशील है, उन्हें किसी कारणवश कुछ रुकावटों का सामना निरन्तर झेलना पड़ रहा हो, उदाहरण स्वरूप कह सकते है कि वे D में होकर भी केवल $D - \{1, 2, 3, \ldots\}$ आयाम में रहने जैसा अनुभव कर रहे हो, मतलब कुछ निश्चित बाधाएं हैं, जो उनको उन्मुक्त होने से निरन्तर रोकती हैं, तब ऐसी स्थिति में कुल निर्देशांकों की संख्या में गिरावट आती हैं, अर्थात् अगर कुल बाधाओं की संख्या माना कि C है, तो कुल स्वतंत्र निर्देशांक की संख्या $f = DN - C$ होगी। कुछ लोग इसे स्वतंत्रता की कोटि (डिग्री ऑफ फ्रीडम) कहते हैं, इसलिए ताकि यह f हमें बताता है कि सभी सम्भव निर्देशांक की संख्याओं में से वे कितने स्वतंत्र निर्देशांक हैं जो हमारे तन्त्र की मौजूदा स्थिति को परिभाषित कर सकती है, साथ ही भौतिक स्तर यह f संख्या एक अन्य अर्थ रखता है कि एक कण कितनी तरह से अपनी कुल उर्जाओं को छोटे-छोटे हिस्सों में बांट सकता है। अब आपको यह

सोचना चाहिए कि कैसे k जो सामान्यीकृत निर्देशांक q_k आदि राशियों में निम्नअंकित है। वह आखिर स्वतंत्रता की कोटि f से किस प्रकार सम्बन्धित होनी चाहिए। प्राचीन भौतिकी के अनुसार $k = \{1, 2, 3, ..., f\}$ होता है।

अगर हम N कणों को तीन आयाम में क्रियाशील रहने देते हैं, तब किसी समय में किसी भी बाधाएं की अनुपस्थिति में कुल समीकरणों की संख्या क्रमशः लग्रेंज हैमिल्टन एवं हैमिल्टन-जैकोबी के अनुसार $3N$, $6N$ तथा $N+1$ होगी। हैमिल्टन के अनुसार $6N$ इसलिए है क्योंकि हैमिल्टनियन में दो स्वतन्त्र चर राशियां हैं, q_k तथा p_k। इस तरह से एक कण मात्र 6 निर्देशांकों से प्रदर्शित होगा। अब ज़रा फिर सोचिए कि वह एक कण तृतीय आयाम में क्रियाशील है, किन्तु उसकी अवस्था को प्रदर्शित करने के लिए हमें 6 निर्देशांक की आवश्कता पड़ रही है, उसका क्या अर्थ निकाला जाए? इसके दो अर्थ निकाले जा सकते हैं।

1. इस व्याख्या में हम एक कण का विचार करते हैं, जो "तृतीय स्थानिक आयाम" में गतिशील है, यह आयाम समान स्थान या जगह ही है, जो तीन परस्पर लंबवत रेखाओं से संयोजित है, इस आयाम में उस कण के स्थान का निर्देशांक (q_1, q_2, q_3) कहते है। उसी कण का कुछ रेखीय संवेग भी है, जिसके तीन अवयव है, (p_1, p_2, p_3)। इस प्रकार कुल 6 निर्देशांक बिन्दु हुए कण का "तृतीय स्थानिक आयाम" में । आपको शायद अंदाजा हो गया होगा की यह स्थिति नीरस है, चूंकि यह जरूरी नहीं कि q_k एवं p_k सर्वदा वस्तु के स्थान का निर्देशांक और रेखीय संवेग ही हो, बल्कि सामान्यीकृत राशियां भी हो सकती हैं। अतः किसी कण के लिए यह चित्रण उपयोगी प्रतीत नहीं होती हैं।

2. इस व्याख्या में भी हम उसी कण का विचार करते हैं, किन्तु वह एक "विशेष षष्ठ आयाम" में गतिशील है, इस आयाम या स्थान का संयोजन हेतु q_k एवं p_k के अवयव इसके भुजाएं के भांति हैं , मतलब कि विशेष षष्ठ आयाम की छह दिशाएं है जो $(q_1, q_2, q_3, p_1, p_2, p_3)$ द्वारा प्रदर्शित होते हैं, जहां सभी परस्पर लंबवत, स्वतंत्रतपूर्वक सहअस्तित्व एवं सामान्यीकृत भौतिक राशि के अवयव है, चित्र (1.4) को देंखे। भौतिकशास्त्री इस विशेष षष्ठ आयामी स्थान को प्रावस्था-समष्टि (फेज़ स्पेस) कहते है। हम जिस कण के गति बारे में विचार कर रहे थे, उसकी प्रावस्था (गति से संबंधित सभी अवस्थाएं) को एक प्रतिनिधि बिन्दु (रिप्रजेंटेटिव पॉइंट) के स्वरूप में प्रावस्था-समष्टि में उकेरी जाती हैं, जिसे $G(q_i, p_i)$ द्वारा दर्शाया जा सकता है। यह आयाम वस्तु के सभी संभव प्रावस्थाएँ का समुंद्र स्वरूप-सा है, अर्थात् प्रावस्था समष्टि है। जब कोई कण एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाता है, तो उसके उपलक्ष्य में प्रावस्था-समष्टि में उसकी प्रतिनिधि बिन्दु एक मार्ग उकेरती है। वास्तविकता यह है कि प्रकृति का कानून यह स्वीकार करता है, अगर प्रावस्था-समष्टि में किसी प्रतिनिधि बिन्दु द्वारा उकेरी गई सभी प्रक्षेप पथों (ट्रेजेकटेरीज) में से जो सबसे सरल, कम खर्चीला, सुगम एवं अल्पतम क्रिया खर्च करने वाल पथ हो, तो प्रकृति उस वस्तु को प्रावस्था समष्टि मे उसका मार्ग प्रशस्त करेगी, शायद प्रकृति आलसी है, इसलिए किसी तरह का सुगम छोटा रास्ता (प्रक्षेप पथ) पर गमन करना चाहती है। ये जो पथ है वह एक तरह से वक्र रेखा ही है, अतः उसको फलन में निरूपित किया जा सकता है, यह फलन ही लाग्रंगियन $\mathcal{L}$ है। इसे हम उपर्युक्त समीकरण (1.10) द्वारा लिख सकते हैं, $\mathcal{L} = \sum_{k=1}^{\infty} p_k \dot{q}_k - \mathcal{H}(q_k, p_k, t)$, इसके तथा कलन गणित के सहायता से हम सबसे सुगम प्रक्षेप पथ पता कर सकते है। जहां $S = \int \mathcal{L} dt + S_0$, ग्रहण किया जा सकता है, S को क्रिया-चर (एक्शन वैरियेबल) कहते हैं। अभी तत्काल हम इस चर्चा को यहीं रोकते हुए, प्रावस्था-समष्टि के बारे में अन्तिम कुछ बातें सीखते है, साथ ही हमें ये भी एहसास हो गया है कि यह चित्रण तुलनात्मक दृष्टि से उपयोगी है।

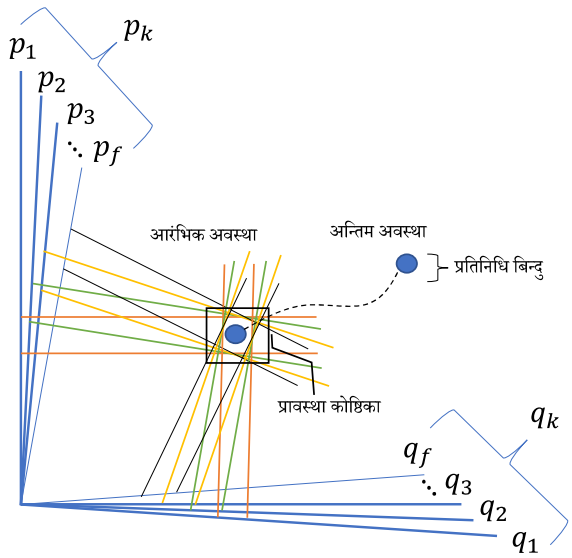

चित्र 1.4: किसी वस्तु के गतिकी को समझने के लिए उसके प्रावस्था समष्टि का स्वाभाविक त्रुटिपूर्ण चित्रण। हमें यह समझना चाहिए कि p_k तथा q_k के विभिन्न अक्ष परस्पर लंबवत हैं। यहाँ दर्शायी गई वस्तु का प्रतिनिधि बिंदु अपनी आरंभिक अवस्था से प्रक्षेप पथ के माध्यम से अंतिम अवस्था को प्राप्त होता है।

अगर हम एक कण के विचार के स्थान पर N कणों का विचार करें, तब यह प्रावस्था-समष्टि का कुल आयाम $6N$ होगा, जहां q_k तथा p_k मुख्य अक्ष रेखाएं समझी जा सकती हैं। जिस प्रकार किसी आयत के आकार को उसकी लंबाई a एवं चौड़ाई b द्वारा प्रदर्शित करते है, उसके क्षेत्रफल का मान $A = ab$ होता है, ऐसा हम सब जानते हैं। अब कल्पना कीजिए कि हम उस आयत के भीतर अगर हम एक वस्तु रख दिए है, जिसकी लंबाई $0.1a$ और चौड़ाई $0.05b$ है, तो अगर हमें उस वस्तु को आयताकार क्षेत्र में खोजना है, या उसकी स्थानिक स्थिति को जानना है, तो सर्वप्रथम हमें क्या करना चाहिए? शायद यही कि आयत को छोटे छोटे हिस्सों में बांटते रहे जबतक कि हरेक का क्षेत्रफल $\delta A = \delta a \cdot \delta b \to 0.005ab$ ना हो जाए। तब a को ठीक दस हिस्सों एवं b को बीस हिस्सों में बांट देने से, जो इकाई क्षेत्रफल प्राप्त होगी, वह उस रखीं गई वस्तु के नाप के लगभग बराबर होगी (हल्की बड़ी)। अब इस छोटे या इकाई क्षेत्रफल को कोष्ठिका कहते हैं। अगर हम उस आयत में एक की जगह दो वस्तुएं रखते हैं, तो इकाई क्षेत्रफल हमें मिलता उसका मान, $\delta A = (\delta a \cdot \delta b)_{\text{एकम्}} + (\delta a \cdot \delta b)_{\text{द्वि}} \to 0.005ab + 0.005ab \to 2(0.005ab)$ होगा। उसी प्रकार हमारे पास अगर f संख्याओं में वस्तुएं होती तो इकाई क्षेत्रफल $f(0.005ab)$ के बराबर होगा।

कुछ इसी तरह का कार्य हम प्रावस्था-समष्टि के साथ करते हैं, जहां उसकी किसी कोष्ठिका या प्रावस्था-कोष्ठिका (फ़ेज सेल) में वस्तु की प्रतिनिधि बिन्दु $G(q_i, p_i)$ मौजूद रहेगी। चूंकि बिन्दु का कोई आकर-पैमाना नहीं होता, अतः हमें q_k तथा p_k मुख्य अक्ष को अनन्त भाग में विभक्त करना होगा, उतना तक कि जब तक प्रावस्था-कोष्ठिका का क्षेत्रफल $\delta\Gamma = \delta q_k \cdot \delta p_k \to \gamma^f$ न हो जाए। यहां यह ध्यान रखें कि $\delta q_k = (\delta q_1 \cdot \delta q_2 \cdot \delta q_3 \cdots \delta q_f)$, इसी तरह p_k का भी है, जो कि सामान्यीकृत राशियां हैं। ये सभी अपने आप में एक अति विमीय आयतन का बोध करा रहे है। इसलिए कुछ लोग, प्रावस्था-कोष्ठिका के क्षेत्रफल को द्विN-आयामी आयतन भी कहते है। प्राचीन भौतिकी (सांख्यिकीय) बताती है कि γ^f का मान शून्य तक लेकर जाया जा सकता है। ध्यान रहे कि है कि $\delta\Gamma = \gamma^f > 0$, अतः इससे छोटी इकाई नहीं हो सकती हैं, चूंकि हमें ज्ञात हैं की $f = 3N - C$ हैं, अतः $\delta\Gamma = \gamma^{3N-C}$ त्रिआयामी

जगत में N कणों की प्रावस्था-कोष्ठिका का न्यूनतम आयतन का मान हैं।

प्राचीन भौतिकी के दो मुख्य स्तंभ हैं, पहली कि भौतिक राशियां के मान असतत नहीं है और दूसरी कि वह निर्धारणात्मक है, भावार्थ यह है कि कोई भी वस्तु ऊर्जा के किसी स्तर पर रह सकते हैं, एवं हम उसके भविष्य का निर्धारण, आरंभिक अवस्था के ज्ञात होने पर कर सकते हैं। ये केवल ऊर्जा के लिए सत्य नहीं थी किन्तु अधिकांशत: भौतिक राशियों के यही व्यवहार थे। मैक्स प्लैंक ने केवल इतना बताया कि प्रकृति में भौतिक राशियां के मान "असतत भी" हो सकते है। इस एक परिवर्तन ने प्रमात्रिक शब्द का सृजन किया। हमारी भौतिकी से तब प्रमात्रिक भौतिकी विभाजित हो गई। यहां मैं आपको ये बताना जरूरी समझता हूं कि लुडविग बोल्ट्ज़मान ने ऊर्जा के असतत स्वरूप का दर्शन प्लैंक से पूर्व प्रस्तुत किया था। वहीं अल्बर्ट आइंस्टीन ने विशेषत विकिरण की ऊर्जाओं के असतत होने की बात कही, और प्रकाशविद्युतीय प्रभाव को इसके माध्यम को समझाया। जिससे भौतिक राशियों के असतत होने के विचार को सत्यापित कर दिया। जिसे भौतिकशास्त्रियों ने इसे थोड़ी हिचकिचाहट के पश्चात सहर्ष स्वीकार कर लिया, उन्होंने केवल मानना जारी रखा कि सबकुछ मनचाहे स्पष्टता के साथ निर्धारण योग्य है, अत: निर्धारणात्मक का मूल स्तंभ मजबूती के साथ स्थापित रहा। किन्तु जब डी-ब्रॉय के कथनी करनी के बाद सन् 1925 वर्नर हाइजेनबर्ग ने ये प्रमाणित कर दिया कि हम मनुष्य प्रकृति में अंतर्निहित वस्तुएं के विषय में सबकुछ मनचाहे स्पष्टता के साथ निर्धारित नहीं कर सकते हैं। अत: प्रकृति में ना केवल आलस्यता है बल्कि वह लज्जालु भी है और शायद उसकी तस्वीर मानो रंग बिरंगे टिकुलियों से निर्मित हो। हम हाइजेनबर्ग के दावों का विस्तृत अध्ययन अगले अध्याय में करेंगे, अभी के लिए हम केवल शुद्ध तर्क तथा डी-ब्रॉय के कथन एवं प्रावस्था-समष्टि के संयोग से निम्नलिखित प्रकार से गैर-निर्धारणात्मक के आत्ममर्म को समझते एवं निगमन रीति से उसका ठोस आधार निर्मित करते हैं।

प्राचीन भौतिकी के अनुसार प्रावस्था-कोष्ठिका का द्वि-आयामी आयतन मनचाहे ढंग तक छोटा हो सकता है, उसका मान 0 तक जा सकती है, अर्थात प्रावस्था समष्टि में वस्तु के प्रतिनिधि बिन्दु को चिन्हित किया जा सकता है। वही जब हम बात करते है, प्रमात्रिक यांत्रिकी के अनुसार प्रावस्था-कोष्ठिका की द्वि-आयामी आयतन का, तो वह एक निश्चित मान से और अधिक कम नहीं हो सकता, वह मान शायद सामान्यीकृत राशियों के एक युग्म के लिए $\frac{h}{4\pi} = \frac{\hbar}{2}$ है। जिसका अर्थ यह निकलता है कि अगर हमारे प्रतिनिधि बिन्दु के $\delta q_i \cdot \delta p_i$ का मान न्यूनतम $\frac{\hbar}{2}$ के बराबर हो सकती है, इसका अर्थ यह हुआ कि दोनों q_i एवं p_i को जो कि किसी एक वस्तु का एक आयाम में, बिना किसी बाधाएं वाली प्रावस्था-समिष्ट के अक्ष है, उनको सरलता से अधिकतम $\sqrt{\frac{\hbar}{2}}$ मान के भागों में ही विभक्त कर सकते हैं। अब ज़रा ध्यान दे कि अगर प्रावस्था-समिष्ट में एक वस्तु के प्रतिनिधि बिन्दु द्वारा छेंके गए द्वि-आयामी आयतन का मान $(\frac{\hbar}{2})^{3-C}$ से कम रहे तो उस प्रतिनिधि बिन्दु को चिन्हित नहीं किया जा सकता, इस बात जानते हुए भी हम N कणों को तीन आयाम में रखकर, उसके राशि (q_k, p_k) के साथ एक उद्दंड प्रयास करते हैं, जहां दोनों q_k एवं p_k अक्षों में से किसी भी एक को स्वतंत्रता पूर्वक $\sqrt[f]{\frac{\hbar}{2}}$ से और अधिक छोटे मान के टुकड़ों में बांट देते हैं, तो चूंकि हमें पता है कि $\delta q_k \cdot \delta p_k \to (\frac{\hbar}{2})^f$ होता है, अत: दूसरे अनछुए सामान्यीकृत राशि का उस हद तक मान बढ़ेगा ताकि $\delta q_k \cdot \delta p_k \to (\frac{\hbar}{2})^f$ पुर्नस्थापित हो जाए। उदाहरण स्वरूप, अगर ज़ोर जबरदस्ती से $\delta q_k \to q_0$ करे, जहां $q_0 > 0$ व $q_0 < \sqrt[f]{\frac{\hbar}{2}}$ होती हैं , तो इसके परिणामस्वरूप $\delta p_k \to p_0$ होगी, जहां $p_0 < \infty$ व $p_0 > \frac{1}{\sqrt[f]{\frac{\hbar}{2}}}$ की ओर अग्रसर होगी, इसका विपरीत भी सत्य हैं। इसका अर्थ ये हुआ कि हम एक साथ कुछ ख़ास युग्म की सामान्यीकृत राशियों को एकसाथ मनचाहे स्पष्टता के साथ नहीं प्राप्त कर सकते हैं।

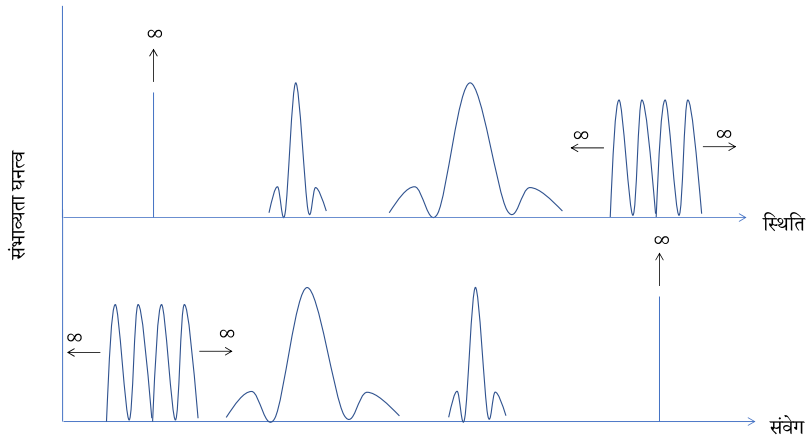

चित्र 1.5: प्रकृति के गैर-निर्धारणात्मक गुण को प्रकट करता एक चित्रण, कि आखिर किस प्रकार हम कुछ राशि युग्म को एक साथ स्पष्टता के साथ नहीं ज्ञात कर सकते हैं।

अन्य उदाहरण में ऐसी ही किसी दो सामान्यीकृत राशियों का एक युग्म लेते हैं, हम एकायामी स्थान x एवं एकायामी संवेग p_x को लिए तो जब हम किसी भी कण की x (या $\delta x \to 0$) को चिन्हित करने का प्रयास करते हैं तो उसके परिणामस्वरूप उस कण की p_x अनन्त में विलीन हो जाती (या $\delta p_x \to \infty$) है ,चित्र (1.5) देखे। ये सभी तर्कसूत्र एक ही तथ्य को दोहरा रही है कि प्रकृति सचमुच ही गोपनीय है। जिसका मतलब ये है कि हाइजेनबर्ग का कथन सत्य है, हम निर्धारण नहीं किए जा सकने वाले संसार में रहते हैं।

अगर हम प्रावस्था समष्टि के अवधारणा से प्रकृति के गैर-निर्धारणात्मक गुण को डी-ब्रॉय के विचार से फलित परिणामों से संयोग करवाकर पुनः समझ सकते हैं। डी-ब्रॉय के अनुसार हर सांसारिक वस्तु से संबंधित द्रव्य तरंग होती ही, वहीं दूसरी ओर प्रावस्था समष्टि की अवधारणा में वस्तुओं को उसकी प्रतिनिधि बिंदु में व्यक्त किया जाता हैं। अगर हम ऐसे ही किसी वस्तु के द्रव्य तरंग को प्रावस्था समष्टि में उसके प्रतिनिधि बिंदु से व्यक्त करने का प्रयास करें तो वह बिंदु, एक बिंदु-सी समझी या परिकल्पित नहीं की जा सकती हैं, बल्कि वह प्रतिनिधि बिंदु एक ऐसी धुंधली-सी संभावनाओं का बादल होगी, मानो एक “तरंगीय अबिन्दु ” जिसका उस समष्टि या कोष्ठिका में कोई निश्चित स्थान नहीं है तथा ना ही कोई निश्चित गति। अतः हम बुनियादी तौर पर उसे चिन्हित ही नहीं कर सकते हैं, नाही प्रस्तुत कर सकते हैं। हमें एहसास हो रहा है की उनके लिए प्रस्तावित प्रावस्था कोष्ठिका में ऐसी वस्तुओं के प्रतिनिधि बिंदु (तरंगीय अबिन्दु) को चिन्हित कर पाने की चेष्टा करने का यह कार्य निरर्थक है। अब इसका निवारण हेतु हम प्रायिकता के नियमों का उपयोग करते हैं, चूंकि इतना तो तय है कि वस्तु प्रावस्था कोष्ठिका में मौजूद होगी, अर्थात अगर हम निम्नलिखित प्रकार से उसकी सभी संभावित प्रावस्थाओं की प्रायिकता के धनत्व, $\rho(q, p; t)$ का

गणितीय समाकलन कर देते हैं,

$$\int\limits_{\text{कोष्ठिका}} \rho(q_1, \ldots, p_1, \ldots; t) d\Gamma = 1 \tag{1.15}$$

तब हम इस सूत्र का उपयोग करके वस्तुओं के सामान्यीकृत राशियों के संभावित मान को ज्ञात कर सकते हैं। चूंकि हमे पता हैं की प्रावस्था कोष्ठिका मे वस्तु की प्रतिनिधि बिंदु (तरंगीय अबिन्दु) की होने की सम्पूर्ण संभावना कुल मान इकाई ही होगी, यह गणितीय प्रमेय है।

वहीं दूसरी ओर जब हम पूरी समष्टि को भी अपना तंत्र माने, तो इस दूसरी स्थिति में हमारा पूरा जगत ही कोष्ठिका समझा जा सकता है, तब उपर्युक्त सूत्र में यह परिवर्तन होगा, जिसका अर्थ यह निकाला जा सकता है कि वस्तु के ब्रह्मांड में मौजूद होने की प्रायिकता अवश्य है, अतः इकाई है।

$$\int\limits_{-\infty}^{\infty} \rho(q_1, \ldots, p_1, \ldots; t) d\Gamma = 1 \tag{1.16}$$

तथा किसी गतिशील राशि $X(q, p, t)$ का प्रत्याशित मान (एक्सपेक्टेड वैल्यूस) होगी,

$$\langle X \rangle = \frac{\int X(q, p, t) \rho(q, p; t) d\Gamma}{\int \rho(q, p; t) d\Gamma} \tag{1.17}$$

इस $\langle X \rangle$ को ही प्रत्यक्ष राशि (ऑब्जवेबल क्वान्टिटी) कहा जाता है। यह वही ठोस आधार है जिसकी मांग हम शुरुवात से कर रहे थे। इसके फलस्वरूप गैर-निर्धारणात्मक प्रमात्रिक भौतिकी का पटल खुलता है।

अध्याय 2

प्रवेश

वर्नर हाइजेनबर्ग ने बहुत जरूरी काम किया, उन्होंने विज्ञान करते रहने के मकसद को चुनौती दे डाली। हमें बचपन से बताया जाता है कि अगर हम ध्यान से देंखे, किसी चीज को खोजेंगे तो उसका जवाब मिलेगा। भौतिकशास्त्रियों का यही पेशा हैं, वे बुनियादी प्रश्नों के उत्तर खोजते हैं, पर अगर कोई आपको ये बोल दे कि जो तुम कर रहे हो वह सब व्यर्थ है, तुम बहुत-सी चीजों को जानकर भी मूलभूत प्रश्नों के जवाब नहीं जान सकते, तुम्हारा ज्ञान अधूरा ही रह जाएगा, सब कुछ नहीं जाना जा सकता है, एक सीमा है। यह हो सकता है कि आप उसके साथ निम्नलिखित चार तरह से पेश आओ, पहली कि उसको पागल कह कर उसकी बातो को नजरअंदाज कर दो। दूसरी कि उससे बहस करो, उसको गलत साबित करने की कोशिश करने की जुगत में लग जाओ। तीसरी यह भी संभावना है कि आप उसको समझो और ये कहो की माना कि सबकुछ नहीं जाना जा सकता है, किन्तु इसका अर्थ ये नहीं की हम प्रयास ही ना करे बाकी अन्य चीजों को समझने का, हो सकता है कि उन कुछ मूल प्रश्नों के उत्तर ना मिले किन्तु बाकी अन्य महत्वपूर्ण चीजों को हम समझ ही सकते है। चौथी संभावना ये हो सकती है कि उसकी बात स्वीकार कर ले और अपने कार्य का परित्याग कर दे। भौतिकी का इतिहास केवल कहता है कि वह व्यक्ति हाइजेनबर्ग थे जिन्होंने कुछ गणना के आधार पर ये कहा कि प्रकृति गैर निर्धारणात्मक है। श्रोडिंगर वह व्यक्ति थे जिसने बहस करी कि हाइजेनबर्ग गलत बात बता रहे हैं, इसलिए उन्होंने उनको गलत साबित करने का प्रयास किया, किन्तु असफल रहे क्योंकि श्रोडिंगर ने उस दौरान जो गणनाएं किए एवं जो बोध हुआ वह हाइजेनबर्ग को सही ही ठहरा रहीं थीं तथा उनके और हाइजेनबर्ग के सूत्रीकरण एकसमान ही थे, फिर भी उनका जहन लाख कोशिशों के बाद भी, खुद से गणना करने के पश्चात भी प्रकृति के गैर निर्धारणात्मक स्वरूप को स्वीकार नहीं कर पा रहा था। फिर पॉल डिराक वह व्यक्ति थे जिन्होंने अन्य पहलुओं पर अपना ध्यान लगाया, उन्होंने कुछ वर्ष बाद यह प्रस्तुत किया कि हाइजेनबर्ग का सोचना सही है साथ ही जो गणना हाइजेनबर्ग ने कि थी और जो गणना श्रोडिंगर ने कि है उन दोनों में समरूपता है। साथ ही डिराक ने अपने अध्ययन के आधार पर एक नई बात ये भी बताई की प्रकृति के दो पक्ष है, प्रकृति में धनात्मक के समान ऋणात्मक ऊर्जाओं का भी अस्तित्व होता है, या यह कह सकते है कि कण भी सत्य है और प्रति कण भी सत्य है। इन भौतिकशास्त्रियों के निष्कर्ष अद्भुत थे किन्तु अनुरूपता होने के बावजूद भी एक निश्चित ठोस गणितीय सिद्धांत की कमी दिखाई दे रही थी, जहां हाइजेनबर्ग ने अपने पर्यवेक्षक बॉर्न के सलाह के बाद अपने विचार को अभिव्यक्त करने हेतु गणित के स्तम्भ आव्यूह (कॉलम मैट्रिक्स) को प्रयोग में लिया, वहीं श्रोडिंगर ने समिश्र फलन (कॉम्प्लेक्स फंक्शन) के अवकलन समीकरण का सहारा लिया, फिर अंत में डिराक ने अपनी अनूठी समग्र शैली को सामने रखते हुए ब्रा-केट नामक बीजगणित का इस्तेमाल से "केट" को प्रमात्रिक अवस्था (क्वांटम स्टेट) का सूचकांक के रूप में स्थापित किया। लगभग सन् 1932 में वोन न्यूमान ने काफी मूल कार्य किया, वह प्रमात्रिक भौतिकी का गणितीय सिद्धांत के प्रस्तुतकर्ता थे, जो डिराक के कार्यों से प्रेरित थे। उन्होंने विभिन्न प्रमात्रिक चित्रों

का हिल्बर्ट समष्टि (हिल्बर्ट स्पेस) की गणितीय अवधारणाओं से मेल करवाया। इस प्रकार प्रमात्रिक गतिकी का जो स्वरूप आज हम देखते हैं, वह हमें प्राप्त हुआ। वर्ष 1948 को रिचर्ड फाइनमेन ने अल्पतम क्रिया के सिद्धांत से प्रेरित होकर प्रमात्रिक गतिकी का एक नवीन चित्र भी प्रस्तुत किया। हालांकि हम केवल हाइजेनबर्ग, श्रोडिंगर एवं डिराक द्वारा दिए गए प्रमात्रिक गतिकी के समीकरणों को समझने का प्रयास करेंगे।

इस अध्याय में मुख्य रूप से हाइजेनबर्ग द्वार दिए गए प्रमात्रिक गतिकी प्रथम समीकरणों के उद्भव तथा महातव्य को विस्तृत तौर से प्रस्तुत किया गया हैं, कि हाइजेनबर्ग का विचार क्या था और उन्होंने किस प्रकार से अपने कार्य में सफल रहें।

2.1 प्रथम प्रमात्रिक चित्र: हाइजेनबर्ग

हाइजेनबर्ग के सामने मुख्य प्रश्न यह था कि आखिर परमाणविक तंत्र को किस प्रकार से वर्णित किया जाए, वह जानना चाहते थे कि विकिरण का पदार्थ पर पारस्परिक प्रभाव क्या पड़ता है? एक ऐसी आधारशिला को स्थापित करना उनका लक्ष्य था जो प्रमात्रिक यांत्रिकी को सैद्धांतिक रूप में केवल "प्रत्यक्ष राशियों" के विभिन्न सम्बन्धों द्वारा व्यक्त किया जा सकता हो। उन्होंने १९८२ विक्रमी, श्रावण माह को (ग्रे० जुलाई 1925), “गतिज और यांत्रिक संबंधों की क्वांटम सैद्धांतिक पुनर्व्याख्या के बारे में” शीर्षक से अपनी मातृभाषा जर्मन में एक शोध पत्र लिखा।

उन्होंने इस समस्या के समाधान हेतु विशेष शैली अपनाई, उनका विचार था कि जिन भौतिक राशियों का प्रकटीकरण नहीं हो सकता है, उन्हें हमें सूत्रों में अंकित नहीं करना चाहिए, उन्हें तवज्जो ही नहीं मिलनी चाहिए। जिसकी प्रेरणा उन्हें अल्बर्ट आइंस्टीन के कार्यों से मिली थी, जहां आइंस्टीन के सापेक्षता के विशेष सिद्धांत में जब कुछ राशियां एक सार्थक काल्पनिक दर्शन प्रदान करने में असमर्थ होती थी, तो ऐसी राशियों को आधार बनाकर सूत्रीकरण नहीं होता हैं, वहीं दूसरी ओर सन् 1925 के शुरुवात में क्रामर्स के साथ सहयोगात्मक अनुसंधान करके उन्हें पता चल गया था कि कौन-सी वे भौतिक राशियां हैं, जो विकिरण का पदार्थ पर पारस्परिक प्रभाव को व्यक्त करने में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, अतः प्रासंगिक थी। चूंकि हमें पता है कि विकिरण की सहायता से ऋणु को नहीं देख सकते हैं, कक्षाओं को नहीं देख सकते, ऋणु कैसा है? उसका आकार कैसा है? किस गति से व किस दिशा में, वह किस तरह व्यवहार करता है, यह सीधे तौर से ज्ञात नहीं किया जा सकता है। अतः अब जब भी हम कोई सूत्र लिखेंगे तो हम इन बातों का ध्यान रखें कि हमें ऐसी राशियां से अपने समीकरणों को मुक्त रखने का प्रयत्न करना है, जिनका प्रत्यक्ष अनुभव प्रयोगों द्वारा नहीं होता हैं, जो यंत्रों द्वारा मापन योग्य नहीं हैं। वहीं दूसरी तरफ प्रयोगों द्वारा हमें यह पता चलता है कि कुछ ऐसी भी राशियां होती हैं जो सच्ची-सी हैं, वे प्रत्यक्ष रूप में स्थापित है जिन्हें यंत्र से देखा जा सकता है, उदाहरण के लिए किसी भी तरंग की तीव्रता (इंटेंसिटी), आवृत्ति (फ्रीक्वेंसी) तथा तरंग आयाम (अंप्लिट्यूड) को हम प्रत्यक्ष चर राशियां कह सकते हैं। इनको प्रत्यक्ष राशियां कह सकते है क्योंकि खास तौर पर परमाणविक तंत्र के विषय में मुख्य तथ्यों का प्रत्यक्षीकरण वर्णपट्टी के विश्लेषण से सम्भव हुआ था, जहां वर्णपट्टी में प्रदर्शित तरंग की तीव्रता, आवृत्ति व तरंदैर्ध्य मापन योग्य थे, अतः इनसे ही अन्य महत्वपूर्ण राशियों जैसे ऋणु की ऊर्जा के बारे में गणनाएं कर पाएं थे। 1925 के शोध पत्र में हाइजेनबर्ग ने इस बात को चिन्हित किया कि कैसे सोमरफेल्ड के परमाणु सम्बन्धी अभिगृहीत की सहायता से हाइड्रोजन परमाणु तथा स्टार्क प्रभाव को समझा जा सकता हैं, वहीं अन्य लंबित समस्याएं जैसे अप्राकृत ज़ीमान प्रभाव, व्यत्यस्त क्षेत्र (क्रॉसड फिल्ड) आदि के रहस्यों का निराकरण करने में वह असमर्थ थी। इसका मुख्य कारण उन्होंने तब के ज्ञात किए गए सूत्रीकरण में कुछ ऐसे राशियों के निहित होने को जिम्मेदार ठहराया, जो हाइजेनबर्ग के अनुसार प्रत्यक्ष राशियां नहीं थीं। जैसा कि हमें पता है, हाइजेनबर्ग परमाणविक तंत्र को एक गणितीय सूत्र में बांधना चाहते थे, उनका अनुमान था कि किसी परमाणु में ऋणु के व्यवहार को प्रदर्शित करने हेतु गति का गैर-आवर्त समीकरण (अनहार्मोनिक इक्वैशन ऑफ मोशन) $\ddot{x} + \lambda x^2 = f(x)$ पर्याप्त है। वह भी तब, जब हम $\ddot{x}$ तथा $f(x)$ को प्रत्यक्ष राशियों की सहायता से

वर्णित करते हैं।

हम इस बात को समझते हैं कि मनुष्य अवलोकन द्वारा बहुत सारी बातों को समझ सकता है, इस कथन पर जोर देते हुए हम छोटा-सा गणितीय अभ्यास करते हैं, हम गणित के अनंत श्रेणी के रूप में लिखे गए चरों के साथ एक आवधिक भौतिक प्रणाली के साधारण विवरण के विकास का प्रयास करते हैं।

हम मानते कि एक प्रत्यक्ष चर राशि $q(t)$ है, जिसका मान समय पर निर्भर करता है, उसकी कुछ मौलिक आवृत्ति $\omega = 2\pi f$ होनी चाहिए, अगर $q(t)$ को आवर्ती फलन (पीरियॉडिक फंक्शन) होना स्वीकार करते हैं।

गणित में फूर्ये श्रेणी के अनुसार $q(t)$ को लिखा जा सकता है,

$$q(t) = \cdots + q_{-2}e^{-2i\omega t} + q_{-1}e^{-i\omega t} + q_0 + q_1 e^{i\omega t} + q_2 e^{2i\omega t} + \ldots \tag{2.1}$$

अतः यहां q_{-n} तथा q_n समिश्र गुणांक हैं, जो आवर्ती फलन के आयाम का प्रकटीकरण कर रहे हैं। चूंकि ये समिश्र संख्याएं (कॉम्प्लेक्स नम्बर्स) है, अत: इन्हें $\mu + i\nu$ में पुन: व्यक्त किया जा सकता है, जहां μ एवं ν वास्तविक संख्याएं हैं, और $i = \sqrt{-1}$ है। अब उपर्युक्त समीकरण को बदला जा सकता है,

$$\begin{aligned}
q(t) &= q_0 + \sum_{n=1}^{\infty}\left[q_{-n}e^{-ni\omega t} + q_n e^{ni\omega t}\right] \\
&= q_0 + \sum_{n=1}^{\infty}\left[(\mu_n - i\nu_n)e^{-ni\omega t} + (\mu_n + i\nu_n)e^{ni\omega t}\right] \\
&= q_0 + \sum_{n=1}^{\infty}\left[2\mu_n\left(\frac{e^{ni\omega t} + e^{-ni\omega t}}{2}\right) + 2i\nu_n\left(\frac{e^{ni\omega t} - e^{-ni\omega t}}{2}\right)\right] \\
q(t) &= q_0 + 2\sum_{n=1}^{\infty}\left[\mu_n cos(n\omega t) - \nu_n sin(n\omega t)\right]
\end{aligned} \tag{2.2}$$

यह काफ़ी अद्भुत है कि कैसे जो पहले समिश्र राशियों की अंनत श्रेणी थी, उन्हें योग करने से हमें केवल वास्तविक संख्या प्राप्त हुई। अगर हम इसी प्रकार के किन्हीं दो आवर्तीपूर्ण प्रत्यक्ष चरों को लेकर उनका गुणा कर ले तो हमें, $C(t) = a(t)b(t)$ से प्राप्त होता हैं,

$$\begin{aligned}
C(t) = \ldots(\cdots + a_{-1}b_0 + a_0 b_{-1} + a_1 b_{-2} + \ldots)e^{-i\omega t} \\
+ (\cdots + a_{-1}b_1 + a_0 b_0 + a_1 b_{-1} + \ldots) \\
+ (\cdots + a_0 b_1 + a_1 b_0 + a_2 b_{-1} + \ldots)e^{i\omega t}\ldots
\end{aligned}$$

जहां $a(t)$ एवं $b(t)$ को दोनों उपर्युक्त समीकरणों (2.1) एवं (2.2) की सहायता से बारी-बारी लिख सकते हैं,

$$
\begin{aligned}
a(t) &= \cdots + a_{-1}e^{-i\omega t} + a_0 + a_1 e^{i\omega t} + \ldots \\
&= a_0 + 2\sum_{n=1}^{\infty}[\alpha_n cos(n\omega t) - \beta_n sin(n\omega t)] \\
b(t) &= \cdots + b_{-1}e^{-i\omega t} + b_0 + a_1 e^{i\omega t} + \ldots \\
&= b_0 + 2\sum_{n=1}^{\infty}[\rho_n cos(n\omega t) - \sigma_n sin(n\omega t)]
\end{aligned}
$$

इस गणितीय अभ्यास से मुख्य रूप से दो बातों का अवलोकन किया जा सकता है, पहली यह कि समीकरण (2.2), हमें इस तथ्य से परिचित करा रहा हैं की "प्रत्यक्ष राशि " सर्वदा वास्तविक ही होती हैं, चाहे क्यों ना वे आरंभ में समिश्र अवयवों में व्यक्त किए गए थे। दूसरा अवलोकन हाइजेनबर्ग ने करा कि उपर्युक्त समीकरण (2.1) में जो फूर्ये श्रेणी के अवयव हैं उनको निम्नलिखित सारणी (ऐरे) के रूप में सजाकर लिखा जा जाए तो उनका स्वरूप सममित प्रतीत होगा, अतः

$$
q(t) = \begin{array}{ccccc}
\ddots & \vdots & \vdots & \vdots & \\
\ldots & q_0 & q_1 e^{i\omega t} & q_2 e^{2i\omega t} & \ldots \\
\ldots & q_{-1}e^{-i\omega t} & q_0 & q_1 e^{-i\omega t} & \ldots \\
\ldots & q_{-2}e^{-2i\omega t} & q_{-1}e^{i\omega t} & q_0 & \ldots \\
 & \vdots & \vdots & \vdots & \ddots
\end{array} \tag{2.3}
$$

अगर हमें सारणी के किसी भी अवयव q_{mn} को प्राप्त करना है, तो निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग कर, हम किसी भी mवां पंक्ति (रो) तथा nवां स्तंभ (कॉलम) के लिए अवयव ज्ञात कर सकते हैं, यह सूत्र है,

$$q_{mn}(t) = q_{m-n}e^{i(m-n)\omega t}$$

जिस प्रकार से हमनें $q(t)$ को उपर्युक्त सारणी (2.3) से दर्शाया गया है, उसी तरह से हम चाहें $a(t)$, $b(t)$ तथा उसके गुणनफल $C(t)$ को भी सारणीबद्ध कर सकते हैं। हालांकि हम ऐसा नहीं कर, बल्कि उनके आमुक सारणियाँ के किसी भी अवयव को ज्ञात करवाने वाली सूत्रों को लिखते है,

$$
\begin{aligned}
a_{mn}(t) &= a_{m-n}e^{i(m-n)\omega t} \\
b_{mn}(t) &= b_{m-n}e^{i(m-n)\omega t}
\end{aligned}
$$

तथा गुणनफल,

$$\begin{aligned} C_{mn}(t) &= \sum_{l=-\infty}^{\infty} a_{ml} b_{ln} \\ &= \sum_{l=-\infty}^{\infty} a_{m-l} b_{l-n} e^{i(m-l)\omega t} e^{i(l-n)\omega t} \\ C_{mn} &= \sum_{l=-\infty}^{\infty} a_{m-l} b_{l-n} e^{i(m-n)\omega t} \end{aligned}$$

ध्यान दीजिए कि, चरघातांकी फलन (एक्स्पोनेंशियल फंक्शन) में घातांक के नियानुसार $(m-l)\omega + (l-n)\omega = (m-n)\omega$ हुआ है। अब अगर हम किसी $(\alpha-\beta)\omega = \alpha\omega - \beta\omega = \omega_{\alpha\beta}$ के रूप में निरूपित करते हैं, तब उपर्युक्त चरघातांकी फलन के घातांक,

$$\omega_{ml} + \omega_{ln} = \omega_{mn} \tag{2.4}$$

इससे प्रेरित होकर हम निम्नलिखित विपरीत रूप लिखतें हैं,

$$\omega_n = n\omega \tag{2.5}$$

एवं

$$\omega_m = m\omega$$

भी प्राप्त होती है। इस तरह से हम देख पा रहे हैं कि तरंग की आवृत्ति में प्रमात्रिक्ता का भाव प्रकट हो रहा है। मैं चाहता हूं कि आप इस नए अंकन को याद रखें, कुछ देर बाद हम लौट कर इसकी विस्तृत चर्चा करेंगे। अभी आपको यह बात जानकर आपको आश्चर्य होगा कि हाइजेनबर्ग इस बात से अज्ञात थे कि आव्यूह आखिर क्या है? बजाय इसके कि उनके जटिल समीकरण किसी आव्यूह का ही प्रतिनिधित्व कर रहे थे। जब वर्नर हाइजेनबर्ग ने 1925 में प्रमात्रिक यांत्रिकी पर अपना शोध पत्र लिखा, तो उन्होंने समीक्षा के लिए बॉर्न को पांडुलिपि दिखाई। उन्होंने तुरंत देखा कि किसी भी प्रमात्रिक कण की इन विशेषताओं को सारणी से बेहतर उन्हें गणितीय आव्यूह (मैट्रिक्स) के रूप में व्यक्त किया जा सकता है। तब यह काफी सरलता से हल होने के साथ ही यह तरीका सार्थक रहेगा।

आप एक उदाहरण से इसे बेहतर ढंग से समझ सकते हैं माना कि एक विशेष राशि [.....] को लिख रहे हैं, जिसका सूत्र,

$$C_{ij} = \sum_{k=1}^{2} A_{ik} B_{kj}$$

फिर आप के शिक्षक बताते हैं कि जो आपने उपर्युक्त में लिखा है, उस एक पंक्ति के सूत्र को 2×2 आव्यूह में व्यक्त किया जा सकता है, अगर $i, j = \{1, 2\}$ हो, तब आप C_{ij} से $\left(\begin{smallmatrix} c_{11} & c_{12} \\ c_{21} & c_{22} \end{smallmatrix}\right)$ निर्मित कर सकते हैं। उसी प्रकार,

$$\sum_{k=1}^{2} A_{ik} B_{kj} = \begin{bmatrix} a_{11} & a_{12} \\ a_{21} & a_{22} \end{bmatrix} \begin{bmatrix} b_{11} & b_{12} \\ b_{21} & b_{22} \end{bmatrix}$$

$$= \begin{bmatrix} a_{11}b_{11} + a_{12}b_{21} & a_{11}b_{12} + a_{12}b_{22} \\ a_{21}b_{11} + a_{22}b_{21} & a_{21}b_{12} + a_{22}b_{22} \end{bmatrix}$$

अतः आप देख सकते हैं, $c_{11} = a_{11}b_{11} + a_{12}b_{21}$ हमें प्राप्त होता है। इस प्रकार जो वह सूत्र था, वह दो आव्यूह A तथा B के अवयवों गुणन को इंगित कर रहा था। शायद इस प्रकार का बोध हाइजेनबर्ग को भी हुआ होगा, कि वह जो कर रहे थे उसे गणित की एक शाखा का उपयोग करके, अधिक सार्थकता के साथ प्रदर्शित किया जा सकता हैं। यहां समझने वाली बात यह है कि जो सूत्र पहले अनजान-सा प्रतीत हो रहा था अब उसको एक गणितीय अर्थ मिल गया। बात केवल सूत्र को पंक्तियों में लिखा जाना या आव्यूह रूप में दर्शाए जाने का नहीं हैं, बल्कि महत्वपूर्ण यह है कि प्रत्यक्ष राशि के सूत्र किसी आव्यूह की अभिव्यक्ति कर रहे थे। इस प्रकार से हम आव्यूह गणित के प्रमेयों का उपयोग कर सकते हैं, ठीक यही कार्य बॉर्न, हाइजेनबर्ग तथा जॉर्डन करने वाले थे।

हम मानव जब चीजों के संदर्भ एवं उसके होने के परिपेक्ष्य को समझ लेते हैं तो उससे उत्पन्न हुई सामग्रियां को धारण कर पाना सरल एवं आनंदमय होता है। अब क्योंकि हमें यह बात पता हो गई है कि कोई प्रत्यक्ष राशि एक आव्यूह ही है, अतः गणित के प्रमयों से हमें पता चलता है, कि किन्हीं दो आव्यूहों का गुणा सर्वदा विनिमेयशील (कम्यूटेटिव) नहीं होते हैं। इसी बात का आभास मैक्स बॉर्न को भी था, अतः हाइजेनबर्ग और जॉर्डन की सहायता से, बॉर्न ने हाइजेनबर्ग के काम को आगे बढ़ते हुए प्रमात्रिक यांत्रिकी का मौलिक विवरण तैयार किया, जिसमे प्रत्यक्ष राशि को आव्यूह रूप में प्रदर्शित किया। मुझे लगता है यह जो संदर्भ मैंने आपको समझाया यह आवश्यक था। अब हम नए अंकन पर लौट आते हैं, जिसे समीकरण (2.4 तथा 2.5) में परिभाषित किया था। ध्यान दीजिए कि वे समीकरण कुछ और नहीं बल्कि ये बता रहे हैं, जिसे बोह्र ने समझाने का प्रयास किया था, कि आवृत्ति अर्थात विकिरण की ऊर्जाएं प्रमात्रिक है, उनके मान सदा निरंतर नहीं है बल्कि यह छोटा-सा सूत्र काफ़ी है, इस तथ्य को स्थापित करने के लिए कि विकिरण का पदार्थ पर पारस्परिक प्रभाव क्या होता है और कैसे होता है? ऊर्जाएं असतत मान में उत्पन्न होती हैं, इसे हाइजेनबर्ग ने काफी आसानी से निरूपित कर दिया। हमें पूर्व अध्याय से इस बात की जानकारी है कि जब एक ऋणु एक कक्षा m से दूसरे कक्षा n में कूदता है, तो केवल असतत मान में उर्जा उत्सर्जित करता है, बोह्र ने इसे $E_m - E_n = h(\nu_m - \nu_n)$ प्रकार से गणितीय सूत्र में पिरोया था, अगर इस सूत्र में हम $\hbar = \frac{h}{2\pi}$, नए अंकन से प्रस्तुत करें तो हमें,

$$E_m - E_n = \hbar\omega_{mn} \tag{2.6}$$

मिलता है। यहां आप देख सकते हैं कि h नियतांक सर्वदा धनात्मक है तथा विकिरण की आवृत्ति भी सदा धनात्मक ही रहती हैं, इसका अर्थ यह है कि हमें किसी भी प्रकार की ऋणात्मक मान की ऊर्जाएं प्राप्त नहीं हो सकती। इस अवलोकन का सहारा लेकर मैक्स बॉर्न ने समझा प्रत्यक्ष राशियों के आव्यूह में m तथा n का मान ऋणात्मक संख्या नहीं होगी, तब हमारा जो उपर्युक्त सारणी (2.3) था, वहां हम केवल धनात्मक मान ही स्वीकार करेंगे, अतः मैक्स बॉर्न के अनुसार $q(t)$ का नवस्वरूप,

$$q(t) = \begin{bmatrix} q_0 & q_{01}e^{i(0-1)\omega t} & q_{02}e^{i(0-2)\omega t} & \cdots \\ q_{10}e^{i(1-0)\omega t} & q_{11} & q_{12}e^{i(1-2)\omega t} & \cdots \\ q_{20}e^{i(2-0)\omega t} & q_{21}e^{i(2-1)\omega t} & q_{22} & \cdots \\ \vdots & \vdots & \vdots & \ddots \end{bmatrix} \tag{2.7}$$

हमें दिख रहा हैं कि उपर्युक्त वर्ग आव्यूह में प्रत्येक समिश्र अवयव $\tilde{q}_{mn} = q_{mn}e^{i(m-n)\omega t}$ ठीक दूसरे समिश्र

अवयव $\tilde{q}_{nm} = q_{nm}e^{-i(m-n)\omega t}$ का समिश्र सन्युग्म (कंजुगेट) हैं। जिसे हम गणित में $\tilde{q}^*_{mn}$ द्वारा दर्शाते हैं, अतः

$$\begin{aligned}\tilde{q}_{10} &= \tilde{q}^*_{01}\\ \tilde{q}_{20} &= \tilde{q}^*_{02}\\ \tilde{q}_{21} &= \tilde{q}^*_{12}\\ &\vdots\end{aligned}$$

इस सभी से अर्थ यह निकलता है कि जो कोणीय आवृति ω, वह साधारणतः इस प्रकार, $\omega_{mn} = -\omega_{nm}$ लिखी जा सकती है। जिसका इस्तेमाल कर, हम उपर्युक्त आव्यूह (2.7) के किसी भी अवयव को ज्ञात करवाने वाली सूत्र को लिखते है,

$$\tilde{q}_{mn} = q_{mn}e^{i\omega_{mn}t}$$

अब हम इसमें उपर्युक्त समीकरण (2.6) का प्रयोग करके कोणीय आवृत्ति को उसके समतुल्य ऊर्जा से बदल कर, इसे बेहतर ढंग से लिखने का प्रयास करते हैं,

$$\tilde{q}_{mn} = q_{mn}e^{i\frac{t}{\hbar}(E_m-E_n)} \tag{2.8}$$

हमने समीकरण (2.6) के सहायता से यह देखा कि विकिरण तथा पदार्थ का पारस्परिक प्रभाव क्या रहता है, अब हम मूल प्रश्न आते हैं कि परमाणविक तंत्र को किस प्रकार से गणितीय सूत्रों में वर्णित किया जा सकता है? इस को प्राप्त करने के लिए हाइजेनबर्ग ने उपर्युक्त समीकरण (2.8) का समय के सम्बन्ध में अवकलज लिया, जिसके फलस्वरूप उन्हें प्राप्त होता है,

$$\frac{d\tilde{q}_{mn}}{dt} = \frac{i}{\hbar}(E_m - E_n)q_{mn}e^{i\frac{t}{\hbar}(E_m-E_n)} + \frac{\partial q_{mn}}{\partial t}e^{i\frac{t}{\hbar}(E_m-E_n)}$$

अगर हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि प्रत्यक्ष राशि का आयाम, q_{mn} समय पर निर्भर नहीं करता है, ($\frac{\partial q_{mn}}{\partial t} = 0$), तो हमें प्राप्त होता है,

$$\frac{d\tilde{q}_{mn}}{dt} = \frac{i}{\hbar}(E_m - E_n)q_{mn}e^{i\frac{t}{\hbar}(E_m-E_n)} \tag{2.9}$$

अगर आप ध्यान देंगे तो हम सूत्र के दाएं हिस्सा को समीकरण (2.8) का उपयोग करके और बेहतर ढंग से लिखा जा सकता है,

$$\frac{d\tilde{q}_{mn}}{dt} = \frac{i}{\hbar}(E_m - E_n)\tilde{q}_{mn} \tag{2.10}$$

अगर आप अभी और ध्यान दें रहे हैं, तो इस उपर्युक्त सूत्र को दो स्वरूपों में व्यक्त किया जा सकता है, पहले स्वरूप की प्रेरणा हमें प्राचीन भौतिकी से प्राप्त होती है और दूसरे की प्रेरणा हमें डिराक देते हैं, जिसकी चर्चा हम अगले अध्याय में करेंगे। यहां प्राचीन भौतिकी से प्रेरित अर्थ की व्याख्या करते हैं,

$$\frac{d\tilde{q}_{mn}}{dt} = \frac{i}{\hbar}(E_m\tilde{q}_{mn} - \tilde{q}_{mn}E_n) \tag{2.11}$$

अगर आप पूछते हैं कि मैंने इस प्रकार उपर्युक्त समीकरण में परिवर्तन क्यों किया है या गुणा क्यों किया है? तो मेरा जवाब कुछ इस प्रकार होगा, मैं कहूंगा कि इस प्रकार से गुणन करने का एक ही अर्थ है, "चूंकि हमें पता है कि प्रत्यक्ष राशि $q(t)$, जो समय के साथ परिवर्तनशील तथा उसका स्वरूप एक वर्ग आव्यूह हैं, उसके सभी अवयवों को $\tilde{q}_{\alpha\beta}$ (ये भी समय पर निर्भर हैं, जब $\alpha \neq \beta$ हो अथवा नहीं) के सूत्र की सहायता से ज्ञात किया जा सकता हैं, इसका अर्थ यह हुआ की $\tilde{q}_{\alpha\beta}$ से $q(t)$ का निर्माण किया जा सकता हैं। वहीं ये सभी उर्जाएं $E_\alpha - E_\beta$ हैं, वे कुछ निश्चित मान मात्र हैं। कुछ लोग तंत्र के प्रत्यक्ष गतिशील चर $q(t)$ की उर्जा को E कहते है, या कुछ और लोग इसे वर्ग आव्यूह रूपी प्रत्यक्ष राशि $q(t)$ के अभिलक्षणिक मान (आइगेन वैल्यू) कहते है और कुछ लोग कहेंगे कि यह वे विकर्ण तत्व (डाइऐगनल एलिमेंट्स) हैं, जो उर्जा के किसी एक अज्ञात वर्ग आव्यूह से प्राप्त हो सकते हैं।" , इन सभी बातों को मस्तिष्क में रखकर अगर हम सोचते हैं, तो उपर्युक्त जो गुणन है, वह एक इच्छित फल को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है, जहां हम उस अज्ञात ऊर्जा का आव्यूह (कहें $\mathcal{H} \to H$) तथा हमारे पास जो पहले से प्रत्यक्ष राशि $q(t)$ का आव्यूह है, इनसे क्रमशः दोनों E तथा $\tilde{q}_{\alpha\beta}$ को विस्थापित कर सकते हैं, तब हमें इस प्रकार का सूत्र मिलता हैं,

$$\frac{dq(t)}{dt} = \frac{i}{\hbar}(Hq(t) - q(t)H) \tag{2.12}$$

ध्यान रहे, कि हमने गणितीय क्ले-हैमिल्टन प्रमेय का उपयोग किया है, साथ ही अब उपर्युक्त की सभी राशियां आव्यूहें हैं, और आप तो जानते ही होंगे कि दो आव्यूहों को गुणा करते समय यह बात ध्यान रखनी चाहिए कि जब बाएं आव्यूह में स्तंभों की संख्या, दाएं आव्यूह के पंक्तियों की संख्या के बराबर रहे, तभी आव्यूहों का गुणन संभव है, इसलिए हमने समीकरण (2.11) में उस विशेष प्रकार के परिवर्तन किए थे। प्राचीन भौतिकी के व्याख्या में उपर्युक्त समीकरण (2.12) को पॉसों कोष्टक , $[A, B] = (AB - BA)$ की सहायता से निम्नलिखित प्रकार व्यक्त किया जा सकता है।

$$\frac{dq(t)}{dt} = \frac{i}{\hbar}[H, q(t)]$$

अगर हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि प्रत्यक्ष राशि का आयाम, q_{mn} समय पर निर्भर करेगा ($q_{mn}(t)$), तो हमें प्राप्त होता है,

$$\frac{dq(t)}{dt} = \frac{1}{i\hbar}[q(t), H] + \frac{\partial q(t)}{\partial t}$$

हम पूर्व के अध्याय से समीकरण (1.17) को याद करते हैं, प्रत्यक्ष राशि को $q(t)$ के स्थान पर काल आश्रित वर्ग आव्यूह A लिखना ज्यादा उत्तम प्रतीत होगा, अतः,

$$\frac{dA}{dt} = \frac{1}{i\hbar}[A, H] + \frac{\partial A}{\partial t} \tag{2.13}$$

यह ही सुन्दर-सा सुसंगत सूत्रीकरण हाइजेनबर्ग के अनुसार प्रमात्रिक गतिकी का चित्र है। आप स्वतः देख सकते है कि किस प्रकार समीकरण (2.13), प्रथम अध्याय के समीकरण (1.12) के अनुरूप है।

2.2 प्रकृति की गैर-निर्धारणात्मक रूप

अब तक हमने यह समझ लिया कि प्रत्यक्ष राशियां का आखिर समय में कैसे क्रमिक विकास होता हैं। किन्तु अभी भी प्रकृति के गैर निर्धारणात्मक गुण का गणितीय सूत्रीकरण शेष हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो इस कार्य

का निष्पादन मैक्स बॉर्न करते हैं।

माना कि दो प्रमात्रिक गुणों वाली सामान्यीकृत प्रत्यक्ष के आव्यूहें , $Q = q_{mn}e^{i\omega_{mn}t}$ तथा $P = p_{mn}e^{i\omega_{mn}t}$ हैं। अब या तो पॉसों कोष्टक या साधारण गणित के माध्यम से हम एक अन्य आव्यूह $D = PQ - QP = d_{mn}e^{i\omega_{mn}t}$ को परिभाषित कर सकते हैं, अब हम पूर्व प्रमात्रिक यांत्रिकी में विल्सन-सोमरफेल्ड द्वारा दिए गए प्रमात्रिक शर्त $\oint pdq = J = nh$ तथा बॉर्न के नियम $k\frac{\partial\Phi(n)}{\partial n} = \Phi(n) - \Phi(n-k)$, की सहायता से एक सतत फलन को असतत फलन ने रूपांतरित करते हैं, इस प्रकार से D का विकर्ण तत्व होगा, वो भी तभी जब किसी $m \neq n$ अतः, $d_{mn} = 0$ होता हो।

$$
\begin{aligned}
d_{nn} &= \sum_k (p_{nk}q_{kn} - q_{nk}p_{kn}) \\
&= \sum_k (p_{n,n-k}q_{n-k,n} - q_{n,n+k}p_{n+k,n}) \\
&= -\sum_k k\frac{\partial}{\partial n}[p(n,k)q(n,-k)] \\
&= \frac{1}{2\pi i}\frac{\partial}{\partial n}\sum_k -2\pi i k p(n,k)q(n,-k) \\
&= \frac{1}{2\pi i}\frac{\partial}{\partial n}\oint pdq \\
&= \frac{1}{2\pi i}\frac{\partial}{\partial n}J \\
&= \frac{1}{2\pi i}\frac{\partial}{\partial n}nh \\
d_{nn} &= \frac{h}{2\pi i}
\end{aligned}
$$

इस प्रकार हम देख की $D = d_{nn} = PQ - QP = \frac{h}{2\pi i}I$, जहां I एक अनंत सर्वसम आव्यूह (आइडेंटिटी मैट्रिक्स) है। अतः हमने ज्ञात कर लिया की प्रकृति गैर निर्धारणात्मक है। जिसका गणितीय अर्थ ये हुआ कि कुछ युग्म में प्रत्यक्ष राशियां विनिमेयशील नहीं होतीं हैं। पुनः पॉसों कोष्टक की सहायता से $PQ - QP = \frac{h}{2\pi i}I$ को व्यक्त कर सकते हैं,

$$[Q, P] = \frac{ih}{2\pi}\{Q, P\} \tag{2.14}$$

इसी से वर्ष 1927 में हाइजेनबर्ग द्वारा दिए गए अनिश्चितता सिद्धान्त (अनसर्टेंटी प्रिंसिपल) का सिद्धांत प्रस्फुटित हुआ। $\Delta q_k \cdot \Delta p_k \geq \frac{h}{4\pi}$, जो कुछ और नहीं बल्कि पूर्व के अध्याय में वर्णित प्रमात्रिक वस्तुओं के लिए द्विN आयामी आयतन के मान के समरूप दिखता हैं। यहाँ एक बात का ध्यान दें कि कैसे प्राचीन भौतिकी का पॉसों कोष्टक प्रमात्रिक भौतिकी में विनिमेयक (कॉमम्यूटेटोर) बन गया हैं, मतलब $[\cdot,\cdot] \equiv i\hbar\{\cdot,\cdot\}$, यहाँ मुझे लगता है $i\hbar$ हमें गैर-निर्धारणात्मकता तथा असतता को परिलक्षित कर रहें हो।

इस प्रकार हमने यह समझ लिया कि प्रकृति ना केवल क्रिया के निष्पादन हेतु आलसी (अल्पतम क्रिया) है, और उसके कर्म असतत (प्रमात्रिक) हैं, और अब गोपनीय (गैर निर्धारणात्मक) भी, तथा उसकी उसकी तस्वीर मानों टिकुलियों से बनी है जो कि अनंत तक विस्तृत है।

अध्याय 3

प्रमात्रिक गतिकी

श्रोडिंगर द्वारा दिए गए प्रमात्रिक गतिकी के चित्र के बारे में हम दो साधारण से ऐतिहासिक घटनाओं के विश्लेषण के जरिए समझ सकते हैं। असतत (तथा गैर निर्धारणात्मक पक्ष, जिससे वह तब अनभिज्ञ थे) संसार को व्यक्त करने की इस सहजज्ञ विधा का विकास आखिर क्यों ही हुआ होगा? सबसे पहले जब डिब्रॉय ने 1925 में अपनी परिकल्पना प्रस्तुत की प्रत्येक द्रव्य या पदार्थ का एक प्राकृतिक तरंगीय अथवा वीचि स्वरूप भी होता है, जिसकी तीव्रता का मान उसके संवेग पर निर्भर करता हैं, तो मुख्य रूप (अंतर्दर्शनात्मक) से वह यही कह रहे थे कि उस तरंग का एक समीकरण होना ही चाहिए, जिस का सर्वप्रथम आभास श्रोडिंगर को होता है, यह पहली घटना थी। जिसे श्रोडिंगर आगे 1926 में प्रस्तुत करते हैं कि उस पदार्थ के तरंग को अवकलन समीकरणों में किस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है। दूसरी घटना है जो हमें हाइजेनबर्ग के कार्यों के प्रतिफल के रूप में दिखता है, जिसने श्रोडिंगर की निर्धारणात्मक प्रकृति की विचारधारा को विचलित-सा कर दिया था और वह चाह रहे थे कि वह गैर निर्धारणात्मक प्रकृति की जो व्याख्या दिए गए हैं, उनको झुठला सके, किन्तु वह असफल ही रहें। इस प्रकार से इन दोनों ऐतिहासिक घटनाओं की प्रेरणा से श्रोडिंगर के प्रमात्रिक चित्र का जन्म हुआ प्रतीत होता हैं।

3.1 द्वितीय प्रमात्रिक चित्र: श्रोडिंगर

जैसा कि हमने जाना डिब्रॉय के अनुसार द्रव्य कुछ मामलों में कणों की तरह और अन्य मामलों में तरंगों की तरह व्यवहार करते हैं। लेकिन एक द्रव्य-तरंग में वास्तव में क्या "लहराते" है? कौन से नियम जो यह नियंत्रित करते हैं कि यह द्रव्य की लहर आखिर कैसे-कैसे अपना स्थान परिवर्तित करती है और समय में इसका विकास किस प्रकार होता है? उदाहरण के लिए, यदि एक ऋणु के द्रव्य तरंग का तरंगीय आयाम को त्रि-विमायी स्थिति ($\vec{r}$) और समय (t) के एक प्रमात्रिक वीचिफलन (क्वांटम वैवफंक्शन) $\Psi(\vec{r},t)$ में निरूपित कर प्रस्तुत कर दिया जाय, जो सभी $\vec{r}$ के लिए परिभाषित हो, तो क्या इस गणितीय फलन $\Psi(\vec{r},t)$ का कोई भौतिक अनुरूपता होती है? और कैसे हम वास्तव में ऋणु की स्थिति को इंगित करें? अनुरूपता की बात करेंगे तो इसका स्त्रोत हमें प्रकाश की तरंग से प्राप्त हो सकता है चूंकि प्रकाश वास्तव में विद्युत-प्रद्युत तरंग ही हैं, जिसके यदि एक विमा में विद्युतीय तरंग आयाम $E(x,t)$ की बात किया जाए तो यह फलन दिक्-काल में परिवर्तित विद्युत क्षेत्र $|\vec{E}|$ के मान द्वारा परिदर्शित किया जाता है, ऊर्जा घनत्व $|E|^2$ द्वारा सूचित की जाती है। एक विमा में प्रमात्रिक वीचिफलन का वर्ग $|\Psi|^2$ विद्युत क्षेत्र के वर्ग $|E|^2$ के समान व्याख्या प्राप्त करता है। यह बतलाता है कि एक कण के प्रति इकाई लंबाई में पाए जाने की संभावना किसी एक विशेष स्थिति और समय , $|\Psi|^2$, “संभाव्यता घनत्व” से व्यक्त किया जाता है जिस प्रकार

$|E|^2$ को ऊर्जा घनत्व या समीकरण (1.15) के $\rho(q,p;t)$ को प्रायिकता घनत्व होते हैं। प्रायिकता P एक कण के लिए किसी एक संकीर्ण अंतराल $(x, x+dx)$ तथा t समय पर समीकरण (1.15) की सहायता से ऋणु के द्रव्य-तरंग की स्थिति को इंगित किया जा सकता है,

$$\int |\Psi(x,t)|^2 dx = P(x, x+dx)$$

द्रव्य-तरंग की इस संभाव्य व्याख्या को बोर्न व्याख्या कहा जाता है।

यह $P(x, x+dx) \to 1$ हो जाएगा अगर हम पूर्णरूपेण त्रिविमायी जगत में ऋणु के मौजूद होने की कुल प्रायिकता ज्ञात करेंगे।

$$\int |\Psi(\vec{r},t)|^2 d\tau = 1 \tag{3.1}$$

आपको जिज्ञासावश यह प्रश्न पूछना चाहिए की क्यों $|\Psi|^2$ लिया गया हैं नाकि केवल Ψ^2 लिया जाय? इसकी सहायता से प्रमात्रिक वीचिफलन को यह छूट मिलती हैं कि वह अब एक समिश्र फलन भी हो सकता है। चूंकि $i^2 = -1$ हैं वहीं $|i|^2 = 1$ जो अतिआवश्यक है, चूंकि प्रायिकता का मान $0 \leq P \leq 1$ ही रहेगी, इससे एक और बात समझ में आती हैं कि $0 \leq |\Psi|^2 \leq 1$ सर्वदा प्राप्त होनी चाहिए। इस प्रकार प्रमात्रिक वीचिफलन एक समिश्र, सरलीकृत (नॉर्मलईज़ेड) आवर्ती फलन हैं।

अगर हमलोग यह सोचे कि जिस प्रकार $|..|$ का प्रयोग कर i^2 को 1 बना दिया, यही एकमात्र तरीका हैं! तो हमसब भूल कर रहे होंगे, देखिए दूसरी विधि के अनुसार अगर एक i का $i \to -i$ (समिश्र संयुग्म) लेते हो और अन्य को $i \to i$ (अपरिवर्तित) रहने दें, फिर उनका केवल $-i \times i$ लिया जाए, तब

$$-i \times i = -\left(\sqrt{-1}\sqrt{-1}\right) = -(-1)^{2\times\frac{1}{2}} = -(-1) = 1$$

जहां कोई $|..|$ का प्रयोग नहीं लिया गया है। अब चूंकि हमने यह दूसरा तरीका जान लिया है और प्रमात्रिक वीचिफलन एक समिश्र हो सकती है, ऐसी स्थिति में सूत्र (3.1) परिवर्तित होता है, जहां $\Psi(\vec{r},t)^*$ वीचिफलन का समिश्र संयुग्म हो, तब

$$\int \Psi(\vec{r},t)^* \Psi(\vec{r},t) d\tau = 1 \tag{3.2}$$

इससे पहले कि हम गणितीय तामझाम में लीन हो जाए। हमें कुछ गहरी बातों को याद करना और समझना चाहिए। केवल यह जान लेना कि द्रव्य कुछ मामलों में कणों की तरह और अन्य मामलों में तरंगों की तरह व्यवहार करते हैं, जिन्हें वीचिफलन Ψ द्वारा इंगित किया जाता है, यह पर्याप्त नहीं बल्कि बुनियादी रूप से हमें यह समझना है कि यह वीचिफलन आखिर कैसे कणों तथा तरंगों के गुणों को अपने अंदर समेटे हुए हैं। कण आखिर क्या है? शायद वह एक ऐसा वस्तु है जो "सीमित" है, वहीं तरंग एक ऐसी [...] है जो "विस्तृत" है। यह सीमित तथा विस्तृत का गुण अपने आप में विपरीत है, फिर भी हमें किसी प्रकार से इन्हें एक साथ लेकर आना है, तब जाकर हम वीचिफलन को उसका भौतिक अर्थ प्रदान कर सकते हैं। इसे इत्तेफाक कहिए या प्रकृति की विशेषता कि हमने प्राचीन भौतिक शास्त्र से ही जाना है कि अगर समतल तरंगों का अध्यारोपण (सुपरपोजीशन ऑफ प्लेन वैव) किया जाए, जहां हरेक समतल तरंग की विभिन्न आवृत्ति, तरंगीय आयाम व तरंगदैर्घ्य हो तो हमें फल के रूप में एक ऐसी सीमित [...] मिलती है, जो कण को व्यक्त करने के लिए लगभग उचित-सी प्रतीत होती है। कुछ सीमित या स्थानीयकृत चीज को भौतिकशास्त्री वीचिपोटलक (वैव पैकेट) कहते हैं।

गणित के जरिए व्यक्त करें तो, समतल तरंग का समीकरण $\Phi(\vec{r},t) = \phi e^{i(\vec{k}\cdot\vec{r}-\omega t)}$ होता हैं, इसी तरह के विभिन्न आवृत्ति $(\omega/2\pi)$, तरंगीय आयाम (ϕ) व तरंगदैर्घ्य $(2\pi/k)$ के अनंत समतल तरंगों का अध्यारोपण करते है, तब हमें $\Psi(\vec{r},t) = \sum_n^\infty \Phi_n(\vec{r},t)$ मिलेगा, जिसका अर्थ यह हुआ कि पदार्थ के द्रव्य -तरंगीय गुण को व्यक्त करने के लिए यह वीचिफलन अनंत समतल तरंगों के अध्यारोपण को सूचित करता है, अतः यह वीचिपोटलक है।

$$\Psi(\vec{r},t) = \sum_n^\infty \phi_n e^{i(\vec{k}_n\cdot\vec{r}-\omega_n t)} \tag{3.3}$$

अगर इस सूत्र को समकलन के रूप में व्यक्त करें तब हमें ω को k का फलन स्वीकारना होगा, अतः

$$\Psi(\vec{r},t) = \frac{1}{\sqrt{2\pi}}\int \phi(k) e^{i(\vec{k}\cdot\vec{r}-\omega(k)t)} dk \tag{3.4}$$

ज़रा ठहरिए, अगर यहां तक आप आ चुके हैं तो शायद जो मुझे महसूस हो रहा है, वह आप भी कर सकते हैं। एक स्थिति, जैसे कुछ समझ नहीं आ रहा है, कि आखिर हम लोग करना क्या चाह रहे हैं, दूसरी स्थिति हो सकती है कि समझ में तो आ रहा है पर, चीजें संबंधित कैसे हैं यह नहीं पता और अंतिम बात हो सकती है कि यहाँ शब्दों का जो तामझाम हैं, जहां कभी वीचिफलन, कभी वीचिपोटलक, या कभी प्रत्यक्ष राशि या प्रमात्रिक अवस्था आदि आखिर ये सभी कैसे जुड़े हुए हैं या संबंधित है? अगर आप भी इसी तरह की किसी स्थिति में है, तो मुझे एक दूसरी तरीके से उन्हीं बातों को व्यक्त करने का मौका दीजिए, इसके पश्चात ही हम उपर्युक्त समीकरण (3.4) के आगे की क्रिया आरंभ करेंगे।

हमने पूर्व में देखा है कि यह वीचिफलन कुछ और नहीं बल्कि समतल तरंगों के अध्यारोपण से निर्मित एक समुच्चय (वीचिपोटलक) को सूचित करता है, जिससे कहीं ना कहीं प्रमात्रिक विज्ञान में तंत्र की अवस्था का ज्ञान होता हैं (किन्तु कैसे ?), जिसे डिराक आगे प्रमात्रिक अवस्था या अवस्था शर (स्टेट वेक्टर), $|\Psi\rangle$ कहते है। वीचिफलन साधारणतः जिन समीकरणों में अंतर्निहित रहते हैं, उनका स्वरूप गणित के अभिलक्षणिकमान समीकरण $(AX = \lambda X)$ के समान $(X \equiv \Psi)$ रहता है, इसलिए इन वीचिफलन को कभी-कभी हम अभिलक्षणिक फलन तथा अगर $|\Psi\rangle$ ऐसे किसी प्रक्रियाओं मे लिप्त हो तब Ψ अभिलक्षणिक शर भी कहते हैं। अभी ही आपको बिना संकोच के पूछना चाहिए कि पिछले अध्याय में जहां हम प्रत्यक्ष राशि या आव्यूह की बातें कर रहे थे, वे कहां विलीन हो गए? सबसे पहले मैं आपको यह बता दूँ कि वे कहीं विलीन नहीं हुए हैं, वह भी मौजूद होंगे श्रोडिंगर के चित्र में किंतु हाइजेनबर्ग ने जिसे प्रत्यक्ष राशि कहा था, उसे श्रोडिंगर के वीचिफलन कतई नहीं समझे, बल्कि प्रत्यक्ष राशि A से संबंधित है। वहीं प्रत्यक्ष राशि सभी गतिशील चरों का एक विशेष लघु समूह है, जिसे विशेष कारणों [..] से डिराक एक संक्रियक (ऑपरेटर), $\hat{A}$ कहते है, तथा हाइजेनबर्ग वर्ग आव्यूह A में प्रदर्शित करते है। देखिए, जहां प्राचीन भौतिकी में हम गतिशील चर को $\mathcal{A}$ से सूचित कर रहे थे, वह अब प्रमात्रिक यांत्रिकी में संक्रियक के प्रत्याशित मान $\langle\hat{A}\rangle$ के समकक्ष हो जाते है, और ऐसे ही किसी संक्रियक को वीचिफलन पर आरोपित करने से हमें प्रमात्रिक विज्ञान में तंत्र की अवस्था का ज्ञान होता हैं, विभिन्न प्रकार के अभिलक्षणिकमान मिलते हैं तथा इन्हीं अभिलक्षणिक मानों से निर्मित स्तम्भ आव्यूह को अभिलक्षणिक शर (आइगेन वेक्टर) कहते हैं।

अब संभवतः आपको ज्ञात होगा की तरंग मुख्य रूप से तीन तरह के होते हैं। पहली को हम यांत्रिक तरंग कहते हैं, दूसरे को विद्युतप्रद्युत तरंग कहते हैं और तीसरे किस्म को द्रव्य तरंग कहते है, जिसके विषय में हमें डिब्रॉय बताते हैं। वर्ष 1926 के आरंभ काल में श्रोडिंगर को इतनी-सी बात पता थी, उन्होंने तार्किक रूप से यह स्मरण किया कि यांत्रिक तरंग का आधार रॉबर्ट हुक तथा न्यूटन द्वारा दिए गए सूत्रीकरण $\ddot{f} = -\frac{k}{m}f$ से प्राप्त करते हैं, जिसमें

गणितीय क्रियाएं करने पर हमें तरंग का समीकरण $\nabla^2 f = \left(\frac{k}{\omega}\right)\frac{\partial^2 f}{\partial t^2}$ मिलता है, जिसको हल करने पर हमें तरंग का फलन $f = f_0 e^{i(\vec{k}\cdot\vec{r}-\omega t)}$ मिलता हैं। वहीं विद्युतप्रद्युत तरंग के विषय में उसका आधारभूत सूत्रीकरण मैक्सवेल द्वारा मिलता हैं, जिसमें गणितीय क्रियाएं करने पर हमें तरंग का समीकरण $\nabla^2 E = (\varepsilon\mu)\frac{\partial^2 E}{\partial t^2}$ मिलता है, जिसको हल करने पर हमें तरंग का फलन $E = E_0 e^{i(\vec{k}\cdot\vec{r}-\omega t)}$ मिलता हैं। वही जब बात प्रमात्रिक यांत्रिकी के विश्लेषण से द्रव्य तरंग की ओर आती है, तो हमें या उन्हें उपर्युक्त विवरण के अनुरूप केवल कुछ ही बातें पता रहती है, पहली कि द्रव्य तरंग के समीकरण का स्वरूप भी अन्य तरंग के समीकरणों (उपर्युक्त) के समरूप ही होनी चाहिए (शायद, $\nabla^2\Psi = (..)\frac{\partial^2\Psi}{\partial t^2}$!), जिसको हल करने पर हमें प्रमात्रिक तरंग का फलन अर्थात् वीचिफलन $\Psi = \Psi_0 e^{\frac{i}{\hbar}(\vec{p}\cdot\vec{r}-Et)}$ प्राप्त होगा, जहां Ψ_0 वीचिफलन का आयाम है, साथ ही डिब्रॉय व आइंस्टीन के अनुसार $\vec{p} = \hbar\vec{k}$ तथा $E = \hbar\omega$ होते हैं।

सभी का एक अर्थ हुआ कि प्रमात्रिक यांत्रिकी में एक आधारभूत सूत्रीकरण का अभाव है, जिसे अगर प्राप्त कर लिया जाए तो वह संभवतः न्यूटन या मैक्सवेल के मूल भौतिकी सूत्रों के समरूप होना चाहिए। श्रोडिंगर के सामने यही समस्या थी कि उस मूल सूत्र को कैसे जाने या उसका निगमन कैसे करें? तो उत्तर यह है कि इसका निगमन नहीं किया जा सकता हैं, बल्कि श्रोडिंगर ने परिकल्पित किया था।

$$i\hbar\frac{\partial\Psi(\vec{r},t)}{\partial t} = \hat{H}\Psi(\vec{r},t) \tag{3.5}$$

हम केवल श्रोडिंगर की इस परिकल्पना का सत्यापन ही कर सकते हैं, सत्यापन की प्रक्रिया का आरंभ हम वीचिफलन Ψ को t के सापेक्ष में आंशिक अवकलन करने से करते हैं,

$$\begin{aligned}\frac{\partial\Psi(\vec{r},t)}{\partial t} &= -\frac{iE}{\hbar}\Psi_0 e^{\frac{i}{\hbar}(\vec{p}\cdot\vec{r}-Et)}\\ &= -\frac{iE}{\hbar}\Psi(\vec{r},t) = \frac{E}{i\hbar}\Psi(\vec{r},t)\\ i\hbar\frac{\partial\Psi(\vec{r},t)}{\partial t} &= E\Psi(\vec{r},t)\end{aligned} \tag{3.6}$$

इसी तरह से हम वीचिफलन Ψ को एक निर्देशांक x के सापेक्ष में द्वि-क्रम का आंशिक अवकलन करते हैं, ध्यान दें की $|\vec{r}|^2 = x^2 + y^2 + z^2$ होता हैं, जिससे $\vec{p}\cdot\vec{r} = p_x x + p_y y + p_z z$ अतः गणित को जटिल ना बनाते हुए, कुछ देर के लिए $\Psi \to \Psi(x,t) = \psi_x e^{\frac{i}{\hbar}(p_x x - Et)}$ स्वीकार करते हैं, तब

$$\begin{aligned}\frac{\partial\Psi(x,t)}{\partial x} &= \frac{ip_x}{\hbar}\psi_x e^{\frac{i}{\hbar}(p_x x-Et)}\\ &= \frac{ip_x}{\hbar}\Psi(x,t) = -\frac{p_x}{i\hbar}\Psi(x,t)\\ \frac{\partial^2\Psi(x,t)}{\partial x^2} &= \left(-\frac{p_x}{i\hbar}\right)^2\Psi(x,t) = -\frac{p_x^2}{\hbar^2}\Psi(x,t)\end{aligned}$$

अब अन्य निर्देशांकों के लिए (अगर क्रियाएं तीन विमाओं में घटित हो) तब, $\frac{\partial^2\Psi(y,t)}{\partial y^2} = -\frac{p_y^2}{\hbar^2}\Psi(y,t)$ तथा

$\frac{\partial^2\Psi(z,t)}{\partial z^2} = -\frac{p_z^2}{\hbar^2}\Psi(z,t)$ होगी। अब सभी निर्देशांकों एवं $|\vec{p}|^2 = p_x^2 + p_y^2 + p_z^2$ का उपयोग करते हुए, हम एकाग्र रूप से लिखते हैं,

$$\begin{aligned}\left[\frac{\partial^2}{\partial x^2} + \frac{\partial^2}{\partial y^2} + \frac{\partial^2}{\partial z^2}\right]\Psi(\vec{r},t) &= -\frac{p_x^2 + p_y^2 + p_z^2}{\hbar^2}\Psi(\vec{r},t) \\ \nabla^2\Psi(\vec{r},t) &= -\frac{|\vec{p}|^2}{\hbar^2}\Psi(\vec{r},t)\end{aligned} \tag{3.7}$$

हमारे पास यह दो मुख्य (3.6) एवं (3.7) समीकरण हैं, जिनकी सहायता श्रोडिंगर के परिकल्पित सूत्र (3.5) का सत्यापन करना है, चूंकि हमें किसी कण (वीचिपोटलक) के लिए उसकी कुल ऊर्जा (गतिज व स्थैतिक) तथा संवेग के बीच का संबंध पता है, $E = T + V = \frac{|\vec{p}|^2}{2m} + V$, (पूर्व अनुभाग, "प्राचीन भौतिकी का स्मरण" देखें)। इस संबंध की सहायता से समीकरण (3.6) एवं (3.7) का उपयोग कर,

$$\begin{aligned}i\hbar\frac{\partial\Psi(\vec{r},t)}{\partial t} &= E\Psi(\vec{r},t) \\ &= \left[\frac{|\vec{p}|^2}{2m} + V\right]\Psi(\vec{r},t) \\ &= \left[-\frac{\hbar^2}{2m}\nabla^2 + V\right]\Psi(\vec{r},t)\end{aligned}$$

इस प्रकार, अगर उपर्युक्त से $\hat{H} = -\frac{\hbar^2}{2m}\nabla^2 + \hat{V}$ को लिखते हैं, तब प्राप्त होता है,

$$i\hbar\frac{\partial\Psi(\vec{r},t)}{\partial t} = \hat{H}\Psi(\vec{r},t) \tag{3.8}$$

जो श्रोडिंगर के परिकल्पित सूत्र (3.5) ही है, अतः सत्यापन पूर्ण हुआ। कुछ पुस्तकों में इस समीकरण को श्रोडिंगर काल-आश्रित समीकरण भी कहते हैं। यह जो $\hat{H}$ को परिभाषित किया है, उसे हैमिल्टनियन $\mathcal{H}$ का हैमिल्टनियन हर्मिसियन संक्रियक या केवल हैमिल्टनियन संक्रियक ($\hat{H}$) कहते हैं। अगर हम इसी तरह से समीकरण (3.5) को देखते हुए गतिशील चर उर्जा E के लिए उसका तद्विषयक ऊर्जा संक्रियक $\hat{E} = i\hbar\frac{\partial}{\partial t}$ भी परिभाषित कर सकते हैं। इन सभी अवधारणाओं का उपयोग कर संक्षेप में लिखा जा सकता है,

$$\hat{E}\Psi(\vec{r},t) = \hat{H}\Psi(\vec{r},t) \tag{3.9}$$

अब हम उपर्युक्त समीकरण (3.7) के उपयोग से हम हल ज्ञात कर सकते है, जो कि वीचिफलन का समय में विकास को प्रदर्शित करेगा,

$$\begin{aligned}\frac{\partial\Psi(\vec{r},t)}{\Psi(\vec{r},t)} &= \frac{1}{i\hbar}\hat{H}\partial t \\ \int_0^t \frac{\partial\Psi(\vec{r},t)}{\Psi(\vec{r},t)} &= ln\left(\frac{\Psi(\vec{r},t)}{\Psi(\vec{r},0)}\right) = \frac{1}{i\hbar}\hat{H}\int_0^t \partial t = -\frac{i}{\hbar}\hat{H}t\end{aligned}$$

अतः

$$\Psi(\vec{r},t) = \Psi(\vec{r},0)e^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}t} \tag{3.10}$$

अततः प्रमात्रिक के संसार को व्यक्त करने की इस विधा को श्रोडिंगर के प्रमात्रिक गतिकी का चित्र (3.8) कहते हैं।

3.2 डिराक चित्र

डिराक एक विद्वान थे, उन्होंने सभी प्रमात्रिक सम्बन्धी विचारों को एकत्रित कर, एक मूल गणितीय आधार प्रदान किया। उदाहरण स्वरूप समीकरण (3.10) में $e^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}t}$ आखिर क्या है? क्या यह संभव हैं कि हम यह दर्शाने में सक्षम हो पाए जब एक "[..(काल आश्रित)..]" किसी $\Psi(\vec{r},0)$ पर आरोपित हो; तब $\Psi(\vec{r},0) \rightarrow \Psi(\vec{r},t)$ में परिवर्तित हो जाना चाहिए। इसका अर्थ यह निकल कर आता है,

$$\text{अंतिम} = [..(\text{काल आश्रित})..] \times \text{आरंभ}$$

मूल समीकरण हैं। हम इसे एकात्मक संक्रियक (यूनिटेरी ऑपरेटर) कह सकते हैं। इसी तरह के संक्रियक का प्रयोग कर हम ना केवल समय में फलन के विकास को समझ सकते हैं साथ ही प्रत्यक्ष राशियों के विकास को भी समझ सकते हैं, अर्थात् एक ऐसी व्यवस्था विकसित कर ली गई है, जिसकी सहायता से हम श्रोडिंगर तथा हाइजेनबर्ग के चित्रों को प्रस्तुत कर सकते हैं।

3.2.1 डिराक के अनुसार : श्रोडिंगर चित्र

अब हम एकात्मक संक्रियक $\hat{U}$ की परिकल्पना करते है, जो कि एक तत्व होता है, रैखिक सदिश समष्टि (लिनीअर वेक्टर स्पेस) का, जिसका उपयोग कर हम प्रमात्रिक वीचिफलन Ψ का समय में विकास को व्यक्त करते है। आप यह पूछ सकते हैं कि हम एकात्मक संक्रियक की सहायता से यह कार्य पूर्ण कैसे करते हैं, साथ ही यह प्रदार्थ की स्थिति के आगामी स्थितियों का निर्धारण (भविष्यवाणी) करने के लिए उपयोग में कैसे लाया जाता है?

अगर प्रमात्रिक अवस्था का आरंभिक काल t_0 में $|\Psi(t_0)\rangle$ हो एवं किसी भविष्यत काल t में प्रमात्रिक अवस्था $|\Psi(t)\rangle$ रहें। तब एकात्मक संक्रियक की सहायता से हम प्रस्तुत करते है,

$$|\Psi(t)\rangle = \hat{U}(t,t_0)|\Psi(t_0)\rangle \tag{3.11}$$

अगर हम एक मध्यकाल t_1 की परिकल्पना करते हैं, जो t_0 तथा t के मध्य कहीं व्यतीत हो, तब उपर्युक्त समीकरण (3.11) की सहायता से हम परिमाणित कर सकते हैं,

$$\hat{U}(t,t_0) = \hat{U}(t,t_1)\hat{U}(t_1,t_0) \tag{3.12}$$

अगर वह काल $t_1 = t - \delta t$ रहें तब उपर्युक्त समीकरण में निम्नलिखित परिवर्तन देखने को मिलेगा,

$$\hat{U}(t,t_0) = \hat{U}(t,t-\delta t)\hat{U}(t-\delta t,t_0) \tag{3.13}$$

$\hat{U}(t, t-\delta t)$ को अत्यणु एकात्मक संक्रियक (इनफिनिटिसमल यूनिटेरी ऑपरेटर) कहते हैं। इस संक्रियक का संबंध हर्मिसियन संक्रियक $\hat{H}(t)$ से इस प्रकार से होता हैं, जो एक जनक संक्रियक भी हैं,

$$\hat{U}(t, t-\delta t) = \hat{1} - \frac{i}{\hbar}\delta t\hat{H}(t) \tag{3.14}$$

अब अगर समीकरण (3.13) में (3.14) को रखने पर,

$$\begin{aligned}
\hat{U}(t, t_0) &= \left[\hat{1} - \frac{i}{\hbar}\delta t\hat{H}(t)\right]\hat{U}(t-\delta t, t_0) \\
\hat{U}(t, t_0) &= \hat{U}(t-\delta t, t_0) - \frac{i}{\hbar}\delta t\hat{H}(t)\hat{U}(t-\delta t, t_0) \\
\hat{U}(t, t_0) - \hat{U}(t-\delta t, t_0) &= -\frac{i}{\hbar}\delta t\hat{H}(t)\hat{U}(t-\delta t, t_0) \\
\frac{\hat{U}(t, t_0) - \hat{U}(t-\delta t, t_0)}{\delta t} &= -\frac{i}{\hbar}\hat{H}(t)\hat{U}(t-\delta t, t_0) \\
\left[\frac{\hat{U}(t, t_0) - \hat{U}(t-\delta t, t_0)}{\delta t}\right]_{\delta t\to 0} &= \left[-\frac{i}{\hbar}\hat{H}(t)\hat{U}(t-\delta t, t_0)\right]_{\delta t\to 0}
\end{aligned}$$

जिससे हमें $\hat{U}$ के लिए एक आंशिक अवकलन समीकरण प्राप्त होता हैं,

$$i\hbar\frac{\partial\hat{U}(t, t_0)}{\partial t} = \hat{H}(t)\hat{U}(t, t_0) \tag{3.15}$$

आप देख सकते हैं कि किस प्रकार उपर्युक्त समीकरण एक तरह से संक्रियक की भांति ही व्यवहार कर रहा है, मतलब अगर हम कल्पना करें कि $\hat{H}$ और $\hat{U}$ आव्यूहें हों, तो जो परिवर्तन उनकें गुणन से होता हें,($\hat{H}$ द्वारा $\hat{U}$ पर) ठीक उसी प्रकार का परिवर्तन हम केवल $i\hbar\frac{\partial}{\partial t}$ को $\hat{U}$ पर आरोपित कर प्राप्त कर सकते हैं, अर्थात $\hat{H}(t) \equiv i\hbar\frac{\partial}{\partial t}$ प्रतीत होतें हैं।

इसी तर्क का आगे बढ़ते हुए हम समीकरण (3.15) को प्रमात्रिक अवस्था $|\Psi(t_0)\rangle$ पर क्रियान्वित करते हैं,

$$i\hbar\frac{\partial\hat{U}(t, t_0)}{\partial t}|\Psi(t_0)\rangle = \hat{H}(t)\hat{U}(t, t_0)|\Psi(t_0)\rangle$$

अब समीकरण (3.11) को स्मरण करते है, तब हमें जो समीकरण प्राप्त होता है, वह काल-आश्रित श्रोडिंगर समीकरण (टाइम-डिपेंडेंट श्रोडिंगर इक्वेशन) कहा जाता हैं। यह प्रमात्रिक अवस्था के गति का समीकरण है।

$$i\hbar\frac{\partial|\Psi(t)\rangle}{\partial t} = \hat{H}(t)|\Psi(t)\rangle \tag{3.16}$$

शायद आपको आश्चर्य हो किंतु यह बताना आवश्यक है कि यह समीकरण (3.16) हमारे पूर्व के अध्याय के समीकरण (2.10) के समतुल्य है। अगर हम उस समीकरण को निम्नलिखित तरह से लिख सकते हैं,

$$i\hbar\frac{d\tilde{q}_{mn}}{dt} = -(E_m - E_n)\tilde{q}_{mn}$$

तब तुलनात्मक विश्लेषण करने पर हम हैं प्राप्त होता है कि $i\hbar\frac{d}{dt} \equiv i\hbar\frac{\partial}{\partial t}$, तथा $\tilde{q}_{mn} \equiv |\Psi(t)\rangle$ ध्यान दें कि $(E_m - E_n)$ अभिलक्षणिकमान हैं, जब संक्रियक $\hat{H}$ क्रियान्वित किया जाता हैं, वीचिफलन या अभिलक्षणिक फलन (आइगेन फंक्शन) $\Psi(t)$ पर, अगर हम चाहे तो एक ऐसा समीकरण प्राप्त कर सकते हैं जो समय पर निर्भर नहीं करता है बल्कि वह गणितीय समीकरण होगा,

$$\hat{H}|\Phi(\vec{r})\rangle = E|\Phi(\vec{r})\rangle \tag{3.17}$$

इसे काल-रहित श्रोडिंगर समीकरण (टाइम-इनडिपेंडेंट श्रोडिंगर इक्वेशन) कहते हैं, हम चाहे तो उपर्युक्त समीकरण (3.17) को अन्य तरह से भी प्राप्त कर सकते हैं, इसके लिए हमें सर्वप्रथम समीकरण (3.15) में निहित $\hat{H}$ के विषय में यह मानना होगा कि वह समय पर निर्भर नहीं करता ($\hat{H} \neq \hat{H}(t)$), तब

$$\begin{aligned}
\frac{\partial\hat{U}(t,t_0)}{\hat{U}(t,t_0)} &= -\frac{i}{\hbar}\hat{H}\partial t \\
\int_{t_0}^{t}\frac{\partial\hat{U}(t,t_0)}{\hat{U}(t,t_0)} &= -\frac{i}{\hbar}\hat{H}\int_{t_0}^{t}\partial t \\
ln(\hat{U}(t,t_0)) - ln(\hat{U}(t_0,t_0)) &= -\frac{i}{\hbar}\hat{H}(t-t_0) \\
\hat{U}(t,t_0) &= e^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}(t-t_0)}
\end{aligned} \tag{3.18}$$

हम देख सकते हैं जब $\hat{H}$ समय पर निर्भर नहीं करता है तो $\hat{U}$ का स्वरूप समीकरण (3.18) हो जाता है। अब पुनः हम समीकरण (3.11) का सहायता लेते हैं किंतु इस बार $\hat{U}(t,t_0) = \frac{|\Psi(\vec{r},t)\rangle}{|\Psi(\vec{r},t_0)\rangle}$ से प्रकार प्रदर्शित करते हैं, जिसका उपयोग हम उपर्युक्त समीकरण (3.18) में करते है, जहां साथ में हम यह भी मानते हैं कि आरंभिक समय $t_0 = 0$ थी, अतः $|\Psi(\vec{r},0)\rangle \to |\Phi(\vec{r})\rangle$ हो। तब,

$$|\Psi(\vec{r},t)\rangle = |\Phi(\vec{r})\rangle e^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}t} \tag{3.19}$$

इस प्रकार यह स्पष्ट है, प्रमात्रिक अवस्था का समय में विकास किस प्रकार होता है, जिसे उपर्युक्त समीकरण द्वारा दर्शाया गया है, जो कि पूर्व अध्याय के समीकरण (3.10) तथा (2.8) के भी समरूप है, किन्तु दूसरे वाले से अर्थ में भिन्नता हैं, यह तथ्य सदा स्मरण रखें की हाइजेनबर्ग की प्रमात्रिक चित्र में गतिशील चर/ प्रत्यक्ष राशि या उससे संबंधित हर्मिसियन संक्रियक समय पर आश्रित होते हैं, किन्तु यहाँ श्रोडिंगर के प्रमात्रिक चित्र में प्रमात्रिक अवस्था समय पर आश्रित होती हैं। अब अगर $|\Phi(\vec{r})\rangle$ का प्रसार हर्मिसियन संक्रियक के अभिलक्षणिक शरों के पूर्ण समुच्चय में किया जाए, तब हमे निम्नलिखित अभिलक्षणिक मान समीकरण प्राप्त होते है,

$$\hat{H}|\Phi_i(\vec{r})\rangle = E_i|\Phi_i(\vec{r})\rangle$$

जो (3.17) ही हैं, अतः काल-रहित श्रोडिंगर समीकरण हैं। श्रोडिंगर के अनुसार प्रमात्रिक अवस्था समय पर आश्रित रहती है, किन्तु एक संक्रियक समय पर निर्भर नहीं करता है, तब उस संक्रियक का प्रत्याशित मान होगा,

$$\langle\hat{A}_s\rangle = \frac{\langle\Psi_s(t)|\hat{A}_s|\Psi_s(t)\rangle}{\langle\Psi_s(t)|\Psi_s(t)\rangle}$$

समय के सापेक्ष मे अवकलन करने पर, अगर अभिलक्षणिक फलन सरलीकृत हो,

$$\begin{aligned}\frac{d\langle\hat{A}_s\rangle}{dt} &= \frac{d}{dt}\langle\Psi_s(t)|\hat{A}_s|\Psi_s(t)\rangle \\ &= \left\langle\frac{\partial\Psi_s(t)}{\partial t}\middle|\,\hat{A}_s\,|\Psi_s(t)\rangle + \langle\Psi_s(t)|\hat{A}_s\,\middle|\frac{\partial\Psi_s(t)}{\partial t}\right\rangle\end{aligned} \tag{3.20}$$

अब काल-आश्रित श्रोडिंगर समीकरण (3.16) की सहायता से हम $\frac{\partial\Psi_s(t)}{\partial t}$ का मान $-\frac{i}{\hbar}\hat{H}\Psi_s(t)$ हासिल करते है, तब उपर्युक्त समीकरण,

$$\begin{aligned}\frac{d\langle\hat{A}_s\rangle}{dt} &= \left\langle-\frac{i}{\hbar}\hat{H}\Psi_s(t)\middle|\,\hat{A}_s\,|\Psi_s(t)\rangle + \langle\Psi_s(t)|\hat{A}_s\,\middle|-\frac{i}{\hbar}\hat{H}\Psi_s(t)\right\rangle \\ &= \frac{i}{\hbar}\left[\langle\Psi_s(t)|\,\hat{H}\hat{A}_s\,|\Psi_s(t)\rangle - \langle\Psi_s(t)|\hat{A}_s\hat{H}\,|\Psi_s(t)\rangle\right] \\ &= \frac{1}{i\hbar}\left[\langle\Psi_s(t)|\,(\hat{A}_s\hat{H} - \hat{H}\hat{A}_s)\,|\Psi_s(t)\rangle\right]\end{aligned}$$

प्रत्याशित मान के परिभाषा के अनुसार,
$\langle\Psi_s(t)|\,(\hat{A}_s\hat{H} - \hat{H}\hat{A}_s)\,|\Psi_s(t)\rangle = \langle\hat{A}_s\hat{H} - \hat{H}\hat{A}_s\rangle$ होगा, चूंकि दोनों संक्रियक हैं, अतः विनिमेयक का उपयोग कर $\langle\hat{A}_s\hat{H} - \hat{H}\hat{A}_s\rangle = \langle[\hat{A}_s, \hat{H}]\rangle$ होगा। तब,

$$\frac{d\langle\hat{A}_s\rangle}{dt} = \frac{1}{i\hbar}\langle[\hat{A}_s, \hat{H}]\rangle$$

हालांकि, साधारणतः यह दृष्टिवत होता है, श्रोडिंगर के प्रमात्रिक सूत्रीकरण में,

$$\frac{d\langle\hat{A}_s\rangle}{dt} = 0 \tag{3.21}$$

जिसका अनुसरण करने से हमें उपर्युक्त समीकरण (3.17) पुनः प्राप्त होता है, जिसका अर्थ यह हुआ कि या $[\hat{A}_s, \hat{H}] = 0$ जिससे यह प्राप्त होता हैं, $\langle\hat{A}_s\rangle$ एक नियतांक होगा या $\Phi(\vec{r})$ वीचिफलन काल रहित होनी चाहिए।

इस प्रकार श्रोडिंगर के प्रमात्रिक गतिकी का चित्र का सूत्रीकरण (3.16) और (3.21) द्वारा उपर्युक्त स्वरूपों मे व्यक्त किया गया हैं।

यह भी सिद्ध हैं कि प्रमात्रिक तंत्र बाह्य क्रियाओं की उपस्थिति में संक्रियक $\hat{A}_s$ समय का स्पष्ट फलन होता हैं, $(\partial\hat{A}_s/\partial t \neq 0)$, तब

$$\frac{d\langle\hat{A}_s\rangle}{dt} = \left\langle\frac{1}{i\hbar}[\hat{A}_s, \hat{H}]\right\rangle + \left\langle\frac{\partial\hat{A}_s}{\partial t}\right\rangle \tag{3.22}$$

इस प्रकार वृहत प्रमात्रिक गतिकी के चित्र का सूत्रीकरण (3.16) और (3.22) द्वारा उपर्युक्त स्वरूपों मे व्यक्त किया गया हैं।

3.2.2 डिराक के अनुसार : हाइजेनबर्ग चित्र

डिराक का जो तरीका है वह गणितीय रूप से काफी सरल है और सुंदर है, अब हम उन्हीं के तरीके से हाइजेनबर्ग के प्रमात्रिक गतिकी व दर्शन को व्यक्त करने का पुनः प्रयास करते हैं। इस क्रम में हमें कुछ बातों का ध्यान रखना होगा, जैसे प्रमात्रिक अवस्था शर का मान समय पर निर्भर नहीं करता ($\Psi_h \neq \Psi(t)$) तथा संक्रियक समय पर आश्रित ($A_h = A(t)$) होता है। हमें कुछ पूछना चाहिए क्या हम एकात्मक संक्रियक की सहायता से हाइजेनबर्ग वाले अवस्था शर (Ψ_h) को लिख सकते है? तो उत्तर सकारात्मक मिलेगा,

$$\Psi_h(t) = \hat{U}^{-1}(t, t_0)\Psi_s(t) \tag{3.23}$$

ध्यान दें कि यह $\Psi_s(t)$ श्रोडिंगर का वीचिफलन है जो समय पर निर्भर करता है और वह Ψ_h हाइजेनबर्ग का अवस्था शर का जो समय पर निर्भर नहीं करता, इसे हम निम्नलिखित प्रकार से साबित भी कर सकते है,

चूंकि हमने पूर्व में देखा है (3.11), अतः इसका उपर्युक्त समीकरण में रख कर ,

$$\begin{aligned}\Psi_h(t) &= \hat{U}^{-1}(t, t_0)\hat{U}(t, t_0)\Psi_s(t_0)\\ \Psi_h(t) &= \Psi_s(t_0)\end{aligned}$$

देखिए कैसे हाइजेनबर्ग का अवस्था शर कुछ अन्य नहीं बल्कि आरंभिक (निश्चित) काल के श्रोडिंगर के वीचिफलन के समान है, अतः समय में अवलज करने पर,

$$\begin{aligned}\frac{d\Psi_h(t)}{dt} &= 0\\ i\hbar\frac{d\Psi_h(t)}{dt} &= 0\end{aligned} \tag{3.24}$$

यह हाइजेनबर्ग का अवस्था शर जो समय पर निर्भर नहीं करता है। यह हाइजेनबर्ग के प्रमात्रिक चित्र में गति का समीकरण है, जिसे वीचिफलन के सम्बन्ध में प्रदर्शित किया गया हैं। अब हम एक प्रत्यक्ष राशि $A(t)$ से संबंधित संक्रियक $\hat{A}_h$ को निम्नलिखित तरीके से परिभाषित करते है,

$$\hat{A}_h = \hat{U}^\dagger(t, t_0)\hat{A}_s\hat{U}(t, t_0) \tag{3.25}$$

स्मरण करे, एकात्मक संक्रियक का यह गुण है $\hat{U}^{-1} = \hat{U}^\dagger$, अतः अब समय में अवलज करने पर,

$$\frac{d\hat{A}_h}{dt} = \frac{\partial\hat{U}^\dagger(t, t_0)}{\partial t}\hat{A}_s\hat{U}(t, t_0) + \hat{U}^\dagger(t, t_0)\hat{A}_s\frac{\partial\hat{U}(t, t_0)}{\partial t}$$

अब हम इस समीकरण को बेहतर रूप से व्यक्त करना का प्रयास करें तब पूर्व के एक संबंध (3.15) के अनुसार,

$$\begin{aligned}\frac{d\hat{A}_h}{dt} &= \frac{i}{\hbar}\hat{U}^\dagger(t, t_0)\hat{H}\hat{A}_s\hat{U}(t, t_0) - \frac{i}{\hbar}\hat{U}^\dagger(t, t_0)\hat{A}_s\hat{H}\hat{U}(t, t_0)\\ &= \frac{i}{\hbar}\left(\hat{U}^\dagger(t, t_0)\hat{H}\hat{A}_s\hat{U}(t, t_0) - \hat{U}^\dagger(t, t_0)\hat{A}_s\hat{H}\hat{U}(t, t_0)\right)\end{aligned}$$

अब हम $\hat{U}\hat{U}^\dagger = \hat{1}$, का प्रयोग करते है,

$$\begin{aligned}\frac{d\hat{A}_h}{dt} &= \frac{i}{\hbar}\left(\hat{U}^\dagger(t,t_0)\hat{H}\hat{U}\hat{U}^\dagger\hat{A}_s\hat{U}(t,t_0) - \hat{U}^\dagger(t,t_0)\hat{A}_s\hat{U}\hat{U}^\dagger\hat{H}\hat{U}(t,t_0)\right)\\ &= \frac{i}{\hbar}\left(\hat{H}_h\hat{A}_h - \hat{A}_h\hat{H}_h\right)\\ &= -\frac{i}{\hbar}\left(\hat{A}_h\hat{H}_h - \hat{H}_h\hat{A}_h\right)\\ &= \frac{1}{i\hbar}\left(\hat{A}_h\hat{H}_h - \hat{H}_h\hat{A}_h\right)\end{aligned}$$

अत: विनिमेयक का प्रयोग करने पर,

$$\frac{d\hat{A}_h}{dt} = \frac{1}{i\hbar}\left[\hat{A}_h, \hat{H}_h\right] \tag{3.26}$$

अब अगर संक्रियक $\hat{A}_h$ समय का स्पष्ट फलन रहा होगा $(\partial\hat{A}/\partial t \neq 0)$, तब

$$\frac{d\hat{A}_h}{dt} = \frac{1}{i\hbar}\left[\hat{A}_h, \hat{H}_h\right] + \frac{\partial\hat{A}_h}{\partial t} \tag{3.27}$$

यह हाइजेनबर्ग के प्रमात्रिक चित्र में गति का समीकरण है, जिसे संक्रियक के सम्बन्ध में प्रदर्शित किया गया हैं। अब अगर हम संक्रियक के प्रत्याशित मान के संबंध में गति का समीकरण लिखे,

$$\frac{d\langle\hat{A}_h\rangle}{dt} = \left\langle\frac{1}{i\hbar}\left[\hat{A}_h, \hat{H}_h\right]\right\rangle + \left\langle\frac{\partial\hat{A}_h}{\partial t}\right\rangle \tag{3.28}$$

इस प्रकार हाइजेनबर्ग के प्रमात्रिक चित्र का सूत्रीकरण (3.24) और (3.27) या (3.28) द्वारा उपर्युक्त स्वरूपों मे व्यक्त किया गया हैं, साथ ही यह श्रोडिंगर के प्रमात्रिक चित्र के समरूप है।

3.2.3 तृतीय प्रमात्रिक चित्र: डिराक

अब तक हमने देखा की पूर्व के प्रमात्रिक चित्र, इस बात पर जोर दे रहें थे कि या तो प्रत्यक्ष राशि या प्रमात्रिक अवस्था समय में परिवर्तनशील रहेगी, अब डिराक इन्ही विचारों को फिर से अलग दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत करते हैं। उनका मानना है, कि अगर प्रमात्रिक तंत्र के अवलोकन का प्रयास करे, तब दर्शक तथा तंत्र की परस्परक्रिया की उपस्थिति में दोनों प्रत्यक्ष राशि तथा प्रमात्रिक अवस्था समय पर निर्भर करने लगेगी।

डिराक स्वरचित पुस्तक में निम्नलिखित बातों का उल्लेख करते है। जिसके अनुसार जब भी हम किसी वस्तु का अवलोकन या प्रत्यक्षीकरण करते हैं, या उसके विषय में कुछ जानने का प्रयास करते हैं जैसे उसकी ऊर्जा, संवेग, स्थिति आदि तो कुछ भी हो जाए या कितनी भी कोशिश कर ले, उसके बावजूद भी बाहरी प्रभाव हमारे उस अवलोकन क्रिया में अंतर्निहित रहता है। इस बाहरी प्रभाव को कोई अनचाहे विघ्न कह सकता है। यह हमे एक सीमा का बोध करवाती है, जो वस्तु की प्रकृति में निहित है और जिसे अवलोकनकर्ता आधुनिक तकनीक या प्रायोगिक कौशल का प्रदर्शन करके कभी भी पार नहीं कर सकता है। हम केवल इस अनचाहे विघ्न की मात्रा को समझ सकते हैं। यह दिखाया गया है कि वस्तु अगर छोटी रहे, तो उससे संबंधित अनचाहे विघ्न की मात्रा तुलनात्मक रूप से

अधिक होती है अगर वहीं वस्तु विशालकाय रहे। इस प्रकार विशाल वस्तुओं में ये अनचाहे विघ्न-जो अवलोकन के दौरान उत्पन्न होते हैं उन्हें नजरअंदाज किया जा सकता है, किंतु विशेषतः छोटे वस्तुओं में हम इस प्रकार से काम नहीं कर सकते। ऐसा माना जाता है कि प्राचीन भौतिकी इसलिए बड़े वस्तुओं के विषय में तथ्यात्मक जानकारी (सतत व निर्धारणात्मक) प्रदान करती है, क्योंकि उनसे संबंधित जो अनचाहे विघ्न हैं, उनकी मात्रा काफी न्यून है, किंतु जब बात छोटी वस्तुओं की जाए तो उसके अनुरूप हमारे पास उस काल में कोई सिद्धांत मौजूद नहीं थी। डिराक का सुझाव है, ऐसी स्थिति में हमें एक नवीन सिद्धांत प्रणाली की आवश्यकता होगी। आपको प्रश्न पूछना चाहिए कि उनका यह सुझाव आखिर ऐसा क्यों है, तो इसको व्यक्त करने के लिए उन्होंने एक बात बताई कि जो साधारणतः कारण- प्रभाव का विचार है, उसे हमारी इस चर्चा से संबंधित किया जा सकता है। वह कैसे? तो उत्तर यह होगा विशाल वस्तुओं में अवलोकन तथा उसके न्यूनतम अनचाहे विघ्न के बीच में स्पष्ट भेद है। हमें पता है कि अवलोकन से क्या प्रभाव होता है और उस प्रभाव के साथ जो अनचाहे विघ्न है, उसे अलग किया जा सकता है या नजरअंदाज किया जा सकता है, तो अंततः हम स्पष्ट रूप से जानते हैं की विशाल वस्तुओं में दर्ज प्रभाव का कारण मुख्य रूप से हमारा प्रथम अवलोकन था ना कि न्यूनतम मात्रा के अनचाहे विघ्न मुख्य कारक थे। अब इसी बात को हमें छोटी वस्तुओं के लिए प्रस्तुत करना चाहिए, तब आप जानते हैं कि अनचाहे विघ्न की मात्रा ज्यादा हो सकती है और यह इतनी ज्यादा हो सकती है कि जो मूल अवलोकन से उत्पन्न प्रभाव की मात्रा होगी, उसे भी यह ढक सकती है या दबा सकती है, तो हमें यह ज्ञात कर पाना कठिन होगा की वस्तु अपने प्रभाव से पुनः प्रभावित हो रही है या नहीं अर्थात हम वस्तु का अवलोकन करने से उत्पन्न प्रभाव तथा उस प्रभाव के साथ ही उत्पन्न हुई विघ्न की मात्रा को वह उसी वस्तु पर प्रभाव की मात्रा से स्पष्ट रूप से अलग नहीं किया जा सकता है। अर्थात हम यह निर्णय नहीं ले सकते हैं कि जो प्रभाव हमें दिख रहा है उसका मुख्य रूप से कारण कौन है, क्या वह मूल अवलोकन है या वह अनचाहे विघ्न हैं? इसी प्रकार यह क्रम अनंत तक चल सकता है और हम अनंत प्रयासों के बावजूद भी केवल अनिश्चित जानकारी (असतत व गैर-निर्धारणात्मक) ही प्राप्त कर सकते हैं।

इसे हम एक छोटे से उदाहरण द्वारा समझ सकते हैं क्योंकि हमें पता है कि एक विद्युत आवेशित कण जब एकसमान गतिमान रहती है तो प्रद्युत क्षेत्र पैदा करती है, अब अगर हम यह कल्पना करते रहे हैं कि उस प्रद्युत क्षेत्र का मान इतना अधिक है कि वह छोटे से ऋण आवेश से परस्पर संपर्क कर उसे अपनी निश्चित मार्ग से विचलित करने का प्रयास करें तो यह जो प्रभाव का प्रभाव देखने को मिला अर्थात जो पहले कारण था और उसका प्रभाव और जो बाद के कारण थे और उसका प्रभाव। इन दोनों में भेद कर पाना की मूल प्रभाव क्या था और मूल कारण क्या था यह कठिन हो जाता है। अब इस समस्या का निवारण हम अध्यारोपण के नियम का उपयोग कर कुछ सीमा तक प्राप्त कर सकते हैं। जिसके परिणाम स्वरूप अब हर प्रकार की राशि में यह अध्यारोपण का नियम सम्मिलित होगा साथ ही साथ चाहे वह राशियां प्रत्यक्ष हो गतिशील हो या कोई अवस्था या फलन हो उसमें भी अध्यारोपण के नियम सम्मिलित हैं, यहां तक कि कोई संक्रियक भी अध्यारोपित हो सकता है कुछ अन्य संक्रियकों से। उदाहरण स्वरूप हर्मिसियन संक्रियक हैमिल्टोनियन को हम दो या दो से अधिक भागों में विभक्त कर सकते हैं, जो निर्भर करेगा कि हम कितनी स्पष्टता के साथ ऊर्जा का मापन करना या तंत्र को समझना चाहते है। इसमें प्रथम पद हमेशा मूल होगा, जो प्रथम अवलोकन द्वारा उत्पन्न हुआ था जब कुल प्रभाव से अनचाहे विघ्न को हटा देंगे; और अन्य सभी हैमिल्टोनियन गैर-प्राथमिक कहे जायेंगे जहां अनचाहे विघ्न को स्वीकार करेंगे। गणित में इन्हे क्रमशः $\hat{H}^0$ तथा $\hat{H}^n$, जहां $n = \{1, 2, 3, \dots\}$ अबाधित (अंडिस्टर्बेड) तथा क्षुब्ध (पर्टरब्द) हैमिल्टोनियन कहते हैं। इस प्रकार अवलोकन परिणामों की गणना में एक अपरिहार्य अनिश्चितता है, सिद्धांत हमें सामान्य रूप से केवल एक विशेष परिणाम प्राप्त करने की संभाव्यता की गणना करने में सक्षम बनाता है (शायद इसलिए हम प्रत्याशित मान ज्ञात करने का प्रयास करते हैं) जब हम कोई अवलोकन करते हैं। डिब्रॉय हाइजेनबर्ग तथा श्रोडिंगर ने भी लगभग इसी चर्चा को व्यक्त करने का स्वतंत्र प्रयास किया था, जिसकी अपनी शैली व स्वरुप थे। अंततः कारण-प्रभाव के नियम केवल उस तंत्र पर लागू होते है, जिसके विघ्न की मात्रा शून्य की ओर प्रशस्त (अबाधित) हो, अन्यथा अध्यारोपण

का नियम का उपयोग, प्रत्यक्ष गतिशील राशियों की प्रत्याशित मान में गणनाएं आदि करना ही शेष रह जाता है।

हमें समीकरण (3.19) से यह समझ में आता हैं की $\Psi(t)$ वास्तव में मूल वीचिफलन $\psi(0)$ के अध्यारोपण से संयोजित है, और हम बाह्य कारणों से उत्पन्न क्षुब्ध हैमिल्टोनियन को भी स्वीकार करेंगे तब कुल हैमिल्टोनियन का मान $\hat{H} \approx \hat{H}^0 + \hat{H}^1$ होगा, तब

$$\begin{aligned}\Psi(t) &= \psi(0)e^{-\frac{i}{\hbar}\int_{t_0}^{t}\hat{H}(t)dt} \\ &= \psi(0)e^{-\frac{i}{\hbar}\int_{t_0}^{t}(\hat{H}^0+\hat{H}^1(t))dt} \\ &= \psi(0)e^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0 t}\cdot e^{-\frac{i}{\hbar}\int_{t_0}^{t}\hat{H}^1(t)dt}\end{aligned} \tag{3.29}$$

अब अगर हमारी वीचिफलन सरलीकृत है, तब किसी वर्ग आव्यूह रूपी प्रत्यक्ष चर A का प्रत्याशित मान होगा,

$$\begin{aligned}\langle A\rangle &= \langle\Psi(t)|\,A\,|\Psi(t)\rangle \\ &= \left\langle\psi(0)e^{\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0 t}\cdot e^{\frac{i}{\hbar}\int_{t_0}^{t}\hat{H}^1(t)dt}\middle|\,A\,\middle|\psi(0)e^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0 t}\cdot e^{-\frac{i}{\hbar}\int_{t_0}^{t}\hat{H}^1(t)dt}\right\rangle \\ &\quad \text{उपर्युक्त को नए स्वरूप में सजाया जाए तब,} \\ &= \left\langle\psi(0)e^{\frac{i}{\hbar}\int_{t_0}^{t}\hat{H}^1(t)dt}\middle|\,e^{\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0 t}Ae^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0 t}\,\middle|\psi(0)e^{-\frac{i}{\hbar}\int_{t_0}^{t}\hat{H}^1(t)dt}\right\rangle \\ \langle A\rangle &= \langle\Psi_d(t)|\,A_d(t)\,|\Psi_d(t)\rangle\end{aligned} \tag{3.30}$$

हम मानते हैं कि डिराक चित्र में $\Psi_d(t)$ एक प्रमात्रिक अवस्था शर है, तथा प्रत्यक्ष राशि A_d के लिए $\hat{A}_d$ एक संक्रियक है, और दोनों काल आश्रित हैं। जिस प्रकार से हमने एकात्मक संक्रियक की सहायता से पूर्व में हाइजेनबर्ग के (3.23) एवं श्रोडिंगर के (3.11) मूल अवयवों को प्रदर्शित किया था। उसी प्रकार से पुनः,

$$\Psi_d(t) = \hat{U}_0^{-1}(t,t_0)\Psi_s(t) \tag{3.31}$$

अब, हम पूर्व के एक सूत्र (3.18) का उपयोग करते है, जिसके अनुसार, क्रमशः $\hat{U}_0(t,t_0) = e^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0(t-t_0)}$ तथा $\hat{U}_0^{-1}(t,t_0) = e^{\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0(t-t_0)}$ होगा। तब $\hat{U}^{-1} = \hat{U}^*$ का स्मरण कर,

$$\begin{aligned}\Psi_d(t) &= \hat{U}_0^*(t,t_0)\Psi_s(t) \\ &= e^{\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0(t-t_0)}\Psi_s(t)\end{aligned} \tag{3.32}$$

अब परस्परक्रिया के कारण हमारा पूर्व का समीकरण (3.16), में निम्नलिखित परिवर्तन होगा,

$$i\hbar\frac{\partial|\Psi_s(t)\rangle}{\partial t} = \left[\hat{H}^0(t) + \hat{H}^1(t)\right]|\Psi_s(t)\rangle \tag{3.33}$$

उपर्युक्त समीकरण (3.32) तथा (3.33) की उपयोग कर,

$$\begin{aligned}i\hbar\frac{\partial|\Psi_d(t)\rangle}{\partial t} &= \hat{U}_0^{-1}(t,t_0)\hat{H}_s^1\hat{U}_0(t,t_0)|\Psi_d(t)\rangle \\ &= \hat{H}_d^1(t)|\Psi_d(t)\rangle\end{aligned} \tag{3.34}$$

यह डिराक का अवस्था शर जो समय पर निर्भर करता है। यह डिराक के प्रमात्रिक चित्र में गति का समीकरण है, जिसे वीचिफलन के सम्बन्ध में प्रदर्शित किया गया हैं, जो कुछ अन्य नहीं बल्कि काल-रहित श्रोडिंगर समीकरण ही हैं। अब हम एक प्रत्यक्ष राशि $A(t)$ से संबंधित संक्रियक $\hat{A}_d$ को निम्नलिखित तरीके से परिभाषित करते, (जैसे एकात्मक संक्रियक की सहायता से पूर्व में हाइजेनबर्ग के (3.25) को प्रदर्शित किया था।)

$$\hat{A}_d = \hat{U}_0^{-1}(t, t_0)\hat{A}_s\hat{U}_0(t, t_0) \tag{3.35}$$

अब उपर्युक्त से $\hat{U}_0^{-1}$ का मान रखकर, हमें प्राप्त होता है,

$$\hat{A}_d = e^{\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0(t-t_0)}\hat{A}_s e^{-\frac{i}{\hbar}\hat{H}^0(t-t_0)} \tag{3.36}$$

अब परस्परक्रिया के कारण हमारा पूर्व का समीकरण $\frac{d\hat{A}_s}{dt} = \frac{\partial \hat{A}_s}{\partial t}$ तथा (3.36) प्रयोग करते,

$$\frac{d\hat{A}_d}{dt} = \frac{1}{i\hbar}\left[\hat{A}_d, \hat{H}_d^0\right] + \frac{\partial \hat{A}_d}{\partial t} \tag{3.37}$$

जिससे यह डिराक का संक्रियक जो समय पर निर्भर करता है। यह डिराक के प्रमात्रिक चित्र में गति का समीकरण है, जिसे संक्रियक के सम्बन्ध में प्रदर्शित किया गया है, हमे प्राप्त होता है। जहां $\hat{H}_d^0 = \hat{U}_0^{-1}(t, t_0)\hat{H}_s^0\hat{U}_0(t, t_0)$ है।

अब अगर हम संक्रियक के प्रत्याशित मान के संबंध में गति का समीकरण लिखे,

$$\frac{d\langle\hat{A}_d\rangle}{dt} = \left\langle \frac{1}{i\hbar}\left[\hat{A}_d, \hat{H}_d^0\right]\right\rangle + \left\langle \frac{\partial \hat{A}_d}{\partial t}\right\rangle \tag{3.38}$$

इस प्रकार डिराक के प्रमात्रिक चित्र का सूत्रीकरण (3.34) और (3.37) या (3.38) द्वारा उपर्युक्त स्वरूपों मे व्यक्त किया गया हैं।

अंततः यहाँ यह स्पष्ट है कि श्रोडिंगर(3.22), हाइजेनबर्ग (3.28) और डिराक (3.38) के प्रमात्रिक चित्रों को जब प्राचीन भौतिकी के गतिशील राशि $\mathcal{A}$ के विशेषतः प्रमात्रिक प्रत्यक्ष राशि A को तद्विषयक संक्रियक $\hat{A}$ के प्रत्याशित मान $\langle\hat{A}\rangle$ में प्रस्तुत किया जाता हैं, तब वे सभी एकसमान दिखाई पड़ते हैं, क्रमशः

$$\langle\hat{A}\rangle = \langle\psi_s(t) \mid \hat{A}_s \mid \psi_s(t)\rangle \equiv \langle\psi_h \mid \hat{A}_h(t) \mid \psi_h\rangle \equiv \langle\psi_d(t) \mid \hat{A}_d(t) \mid \psi_d(t)\rangle$$

जहां, हमनें यह माना हैं की सभी वीचिफलन सरलीकृत हैं।

संदर्भ ग्रंथ

[1] सिंह, आर० बी० (2009), इंट्रोडक्शन टू मॉडर्न फिजिक्स, 978-81-224-2922-0 न्यू एज़ इंटरनेशनल (प्र) पब्लिशर्स

[2] ज़्टली, नो० (2009), क्वांटम मैकेनिक्स: कॉन्सेप्ट्स एंड एप्लीकेशंस, 978-04-700-2679-3, विले पब्लिकेशन

[3] जे० जे० सकुराई, जिम नेपोलिटानो (2014), मॉडर्न क्वांटम मैकेनिक्स,978-93-325-1900-8, पेआर्सोन इंडिया

[4] वर्मा, एच० सी०(2009), क्वांटम फिजिक्स, 978-81-925-7140-9, सूर्या पब्लिकेशन गाजियाबाद

[5] डिराक, पी० ए० एम० (1930), दी प्रिंसिपल्स ऑफ़ क्वांटम मैकेनिक्स, 978-01-985-2011-5, क्लेरेंडन प्रेस

[6] उपाध्याय जे० सी० (2016), क्लासिकल मैकेनिक्स, 978-81-831-8939-2, हिमालया पब्लिशिंग हाउस

[7] पथरिया, आर० के० (2016), स्टैटिसटिकल मैकेनिक्स, 978-14-831-0497-3, एल्सेवियर साइंस

[8] बी० एल० वैन डेर वेर्डन (सं०) (1968), सोर्स ऑफ क्वांटम मैकेनिक्स, न्यूयॉर्क: डोवर. [पुराने प्रमात्रिक सिद्धांत और आव्यूह यांत्रिकी के सबसे महत्वपूर्ण शोध पत्रों का संकलन।]

[9] वर्नर हाइजेनबर्ग, 5 दिसंबर 1901 - 1 फरवरी 1976, नेविल मॉट और रुडोल्फ पीयरल्स, बायोग्र० मेमो० फ़े० रॉ० सो०, 1977, 23, 212-251।

[10] मैथमेटिकल हिस्ट्री ऑफ वेव एंड मैट्रिक्स क्वांटम मैकेनिक्स, कार्लोस एम० मैड्रिड-कैसाडो, इनसाइक्लोपीडिया ऑफ लाइफ सपोर्ट सिस्टम्स, ईओएलएसएस पब्लिशर्स, ऑक्सफोर्ड, यूके

[11] ई. श्रोडिंगर (1982), कलेक्टेड पेपर्स ऑन वेव मैकेनिक्स, चेल्सी पब्लिशिंग कंपनी, न्यूयॉर्क।

[12] हाइजेनबर्ग, डब्ल्यू० (1925), गतिज और यांत्रिक संबंधों की प्रमात्रिक सैद्धांतिक के पुनर्व्याख्या के बारे में, जेड० फिजिक 33, 879-893। [आव्यूह यांत्रिकी को स्थापित करता शोध पत्र।]

[13] बॉर्न, एम० और हाइजेनबर्ग, डब्ल्यू० और जॉर्डन, पी० (1926), प्रमात्रिक यांत्रिकी पर-II, जेड० फिजिक 35, 557-615। [प्रसिद्ध 'थ्री-मेन पेपर'।]

[14] डिराक, पी० ए० एम० (1925), प्रमात्रिक यांत्रिकी के मौलिक समीकरण, फ़े० रॉ० सो० ए 109, 642-653। [डिराक द्वारा हाइजेनबर्ग के आव्यूह यांत्रिकी की पुनर्खोज।]

[15] श्रोडिंगर, ई. (1926), प्रमात्रिक्ता एक अभिलक्षणिकिकमान समस्या के रूप में -I, एनालेन डेर फिजिक 79, 361-376। [तरंग यांत्रिकी का संस्थापक पत्र।]

[16] श्रोडिंगर, ई. (1926), हाइजेनबर्ग-बॉर्न-जॉर्डनियन प्रमात्रिक यांत्रिकी के संबंध के बारे में, एनालेन डेर फिजिक 79, 734-756। [श्रोडिंगर का तरंग और आव्यूह यांत्रिकी के बीच तुल्यता का प्रमाण।]

[17] डिराक, पी.ए.एम. (1926), प्रमात्रिक यांत्रिकी के सिद्धांत पर, फ़े० रॉ० सो० ए112, 661-677। [इस पत्र में डिराक ने अपने क्वांटम बीजगणित द्वारा आव्यूह यांत्रिकी और तरंग यांत्रिकी में सुधार किया।]

[18] डिराक, पी.ए.एम. (1927), प्रमात्रिक गतिकी की भौतिक व्याख्या, फ़े० रॉ० सो० ए113, 621-641। [डिराक का सबसे प्रिय पेपर, क्योंकि इसमें गणितीय रूपांतरण सिद्धांत शामिल था।]

-□□□□□□-

सूची

अत्यंत महीन धारियाँ, 10
अत्यणु एकात्मक संक्रियक, 41
अनिश्चितता सिद्धान्त, 33
अबाधित, 46
अभिलक्षणिक फलन, 42
अभिलक्षणिक मान, 32
अभिलक्षणिक शर, 37
अवलोकन, 8
अवस्था शर, 37
आवर्ती फलन, 27
आवृत्ति, 26
आवेश, 5
उत्पलनुमा गति, 9
ऊर्जा, 5
ऋणु, 5
ऋधाणु, 5
एकात्मक संक्रियक, 40
कक्षा, 6
काल-आश्रित श्रोडिंगर समीकरण, 41
काल-रहित श्रोडिंगर समीकरण, 42
केंद्रक, 5
कोणीय चर, 9
कोणीय संवेग, 6
क्रिया-चर, 19
क्षुब्ध , 46
गति का गैर-आवर्त समीकरण, 26
गतिशील चर, 17
चरघातांकी फलन, 29
जनक फलन, 17
तरंग आयाम, 26
तरंगदैर्ध्य, 14
तीव्रता , 26
त्रिज्य दूरी, 9
द्रव्य तरंग, 15
द्रव्यमान, 5
द्वितीयक्रम के अवकलन समीकरण, 15
द्वैत, 14
धणु, 5
नाभि, 6
नियतांक, 7
पंक्ति, 28
परमाणु, 5
पुरस्सरण, 9
पॉसों कोष्टक, 17
प्र-उपकक्षाओं, 11
प्रक्षेप पथों, 19
प्रतिनिधि बिन्दु, 19
प्रत्यक्ष राशि, 23
प्रत्याशित मान, 23
प्रद्युत आघूर्ण, 12
प्रद्युत क्षेत्र, 10
प्रमात्रिक अवस्था, 25
प्रमात्रिक घूर्णम, 13
प्रमात्रिक यांत्रिकी, 5
प्रमात्रिक शर्त, 6
प्रमात्रिक संख्या, 9
प्रमात्रिक्ता, 6
प्रावस्था-कोष्ठिका, 20

प्रावस्था-समष्टि, 19
फलन, 7
महीन धारियां, 6
राशियां, 6
रैखिक सदिश समष्टि, 40
वर्णपट्टी धारियां, 6
विकर्ण तत्व, 32
विकिरण, 5
विनिमेयकारी, 17
विनिमेयशील, 30
विलक्षणता, 6
विहित रूपांतरण, 17
विहित समीकरण, 17
वीचिपोटलक, 36
वीचिफलन, 35
वेग, 6
व्यत्यस्त क्षेत्र, 26
शर, 13
संक्रियक, 37
संयुग्म संवेग, 16
समतल तरंगों का अध्यारोपण, 36
समिश्र फलन, 25
समिश्र संख्याएं, 27
सरलीकृत , 36
सर्वसम आव्यूह, 33
सामान्य अवकलज, 16
सामान्यीकृत निर्देशांक, 16
सामान्यीकृत संवेग, 16
सारणी, 28
सूक्ष्म स्थिरांक, 7
स्तंभ, 28
स्तम्भ आव्यूह, 25
स्थानिक अभिविन्यास, 12
स्वतंत्रता की कोटि, 18
हिल्बर्ट समष्टि, 26